चाँद रानी

चाँद रानी

(उपन्यास)

सत्यप्रकाश संगर

विजय प्रकाशन
भोपाल : अकोला

श्री कन्हैयालाल कपूर
को

"चाँद ! आप हैं मि० बैकुण्ठ।" केसरचन्द ने एक सुन्दर नवयुवक का अपनी पत्नी से परिचय कराते हुए कहा।

"नमस्ते !" नवयुवक ने दोनों हाथ जोड़कर मिसेज़ केसरचन्द की ओर देखकर कहा।

"नमस्ते !" मैंने बहुधा आपको देखा है। लेकिन मैं हैरान थी कि आप हमारे पड़ोसी होकर भी एक परदेशी की तरह रह रहे हैं।"

"दर असल······" नवयुवक इससे आगे कुछ न कह सका। वह झेंप-सा गया।

"डार्लिंग ! आज मि० बैकुण्ठ हमारे साथ खाना खायेंगे।"

"लेकिन मुझे तो अभी सालिगराम के पास जाना है।"

"तो तुम हो आओ।"

"जो आज्ञा।"

और जब वह चला गया, वह नवयुवक को सम्बोधित करके बोली, "मैं आपकी कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ती हूँ तो हैरान हो उठती हूँ। आपकी लेखनी में कितनी शक्ति है !"

"ऐसी तो कोई बात नहीं।"

"और लेखकों का एक पारस्परिक सम्बन्ध होता है—घनिष्ठ और आध्यात्मिक।"

वह खामोश रहा।

"आपने पूछा नहीं कि कैसा सम्बन्ध ?"

"इसलिए कि आप स्वयं ही बतलायेंगी," बैकुण्ठ ने झेंपकर कहा।

"क्योंकि मैं भी प्रायः लिखती हूँ।" वह आँखें नीची करके बोली, जैसे कोई नवविवाहिता अपनी ससुराल का जिक्र कर रही हो।

"यह तो बड़े हर्ष की बात है," उसने कहा, "आप कविता लिखती हैं?"

"कविता सुनाती हूँ, कहानियाँ लिखती हूँ।"

"उन्हें प्रकाशित भी कराती हैं?"

"लिखकर घर पर रखने से क्या लाभ?" वह हँसकर कहने लगी। "फिर ये सम्पादकगण चैन भी कहाँ लेने देते हैं? इनकी फर्माइश खत्म ही कब होती है?"

"क्या मैं कुछ कहानियाँ देख सकता हूँ?"

"सामने मेज़ पर पड़ी हैं।"

उसने अपनी जगह से उठकर कुछ पत्रिकाओं को उठाया और उनके पन्ने पलटने लगा। ये फ़िल्मी और जासूसी पत्रिकाएँ थीं। कुछ में उसका चित्र भी छपा था। एक पत्रिका में सम्पादक-मण्डल में उसका नाम लिखा था।

"तो आप सम्पादन का कार्य भी सँभालती हैं?"

"मैं तो बहुत बचना चाहती हूँ, लेकिन ये मानते ही नहीं। 'राग-रंग' के सम्पादक हमारे अतिथि बनकर आये थे और मेरा नाम सम्पादक-मण्डल में घसीट लिया।"

"यह तो उन्होंने अच्छा ही किया।"

"क्यों?"

"इसलिए कि इससे पत्रिका की 'सेल' पर भी तो काफ़ी असर पड़ेगा।"

"यह तो आप ठीक कह रहे हैं।"

"इन पत्रिकाओं को देखने से पता चलता है कि आप लगातार और

तेज़ी से लिखती हैं।"

"आर्ट भी एक मुसीबत है। जब आप अधिक विख्यात हो जायँ तो यह दर्द-सर बन जाता है। अब तो कहानी लिखने से जी ऊब गया है।"

"अब क्या करने को जी चाहता है ?"

"नाचने को। क्या आप नाचना जानते हैं ?"

"मैं ? नहीं तो।"

"क्या अभी तक आपका ऐसी औरत से वास्ता नहीं पड़ा जो आपको नचा सके ?"

"अभी तक तो नहीं," उसने भोलेपन से उत्तर दिया।

"खैर, सब ठीक हो जायगा।" फिर कुछ रुककर बोली, "देखिए, मि० बैकुण्ठ ! आप कवि हैं, युवा हैं और प्रकृति ने आपको सुन्दर आकृति प्रदान की है। परन्तु आप प्रकृति की इस देन का कोई लाभ नहीं उठाते।"

"मैं समझा नहीं।"

"यदि आपको उपयुक्त गाइड मिल जाता तो आप सोसाइटी में चमक उठते, सफलता आपके पाँव चूमती। लेकिन अब यह काम मुझे करना होगा।"

बाहर कार की आवाज़ सुनाई दी। दो-तीन मिनट पश्चात् उसका पति चार व्यक्तियों के साथ कमरे में दाखिल हुआ।

"मिस्टर बैकुण्ठ ! आइए, आपका अपने मित्रों से परिचय कराऊँ," केसरचन्द उसे सम्बोधित करके बोले, "आप हैं राय साहब सूर्यभान, सरस्वती इंशोरेंस कम्पनी के मैनेजर। आप हैं मि० शमसुद्दीन, इन्स्पेक्टर ऑफ़ इण्डस्ट्रीज़। आप है हमारे नौजवान कवि बलवन्तराय परवाज़ और आप हैं सरदार दिलेरसिंह, नैशनल शू कम्पनी के प्रोप्राइटर।"

उसने सबके साथ हाथ मिलाया और सबके-सब वहीं जम गए।

राय साहब कहने लगे, "मुझे आपसे वही पुरानी शिकायत है। आपने हमें क्यों नहीं बतलाया कि आज आपके जन्मदिन का त्रैमासिक समारोह है ?"

"अब यह भी मेरा ज़िम्मा है ?" वह मुस्कराकर बोली।

"भई, मुझे तो आज सुबह पता चला," शमसुद्दीन कहने लगे, "और मैं जल्दी में यह साड़ी ही ला सका हूँ।"

और उन्होंने चमड़े के एक बैग से एक क़ीमती रेशमी साड़ी निकालकर मेज़ पर रख दी।

"मैं इस बार यह अँगूठी पेश करूँगा," दिलेरसिंह ने जेब से सोने की अँगूठी निकालते हुए कहा।

"मैं समयाभाव से यह घड़ी ही ला सका," राय साहब जेब से एक रिस्टवाच निकालकर बोले।

"आप लोगों का धन्यवाद !" चाँद रानी बोली, "मुझे यह शिकायत है कि आप लोग क्यों इतना कष्ट उठाते हैं ?"

"आप कौनसा कम कष्ट उठाती हैं, जो हर तीसरे माह अपना जन्मदिन मनाकर हमें इतनी शानदार पार्टी देती हैं और हमारा सत्कार करती हैं !"

"यह मेरा कर्तव्य है। मेरे पति के मित्र, मेरे मित्र और फिर सोसाइटी के बगैर ज़िन्दगी ही क्या ? आज का दिन इस कारण भी शुभ है कि हमारे मध्य एक नये सज्जन पधारे हैं। मैं आशा करती हूँ कि श्री बैकुण्ठ हममें शीघ्र घुल-मिल सकेंगे।"

"क्यों नहीं ?" शमसुद्दीन बोले, "केसरचन्द के मित्र आपके मित्र, और आपके मित्र हमारे मित्र।"

सब अट्टहास से हँस पड़े।

"मेरा इनसे दो प्रकार से सम्बन्ध है," चाँद रानी स्पष्टीकरण करते हुए बोली, "आप केवल हमारे पड़ोसी ही नहीं, कवि भी हैं और आप जानते हैं, मैं कवियों और साहित्यिकों पर प्राण न्योछावर करती हूँ।"

"अजी साहब, और प्राण हैं ही किसलिए ?" परवाज़ बोले।

"परवाज़ साहब ! आप बिलकुल ठीक फ़र्मा रहे हैं," चाँद रानी कहने लगी, "आगामी रविवार को हम आपकी ओर से यहाँ चाय पियेंगे और तत्पश्चात् राय साहब की ओर से डिनर खायेंगे।"

"हेयर ! हेयर ! हेयर !" दिलेरसिंह और इन्स्पेक्टर साहब तालियाँ पीटकर बोले।

"उसके बाद अगले दो सप्ताह के कार्यक्रम की घोषणा की जायगी। हाँ, बैकुण्ठ जी ! यहाँ यह रिवाज है कि सब लोग बारी-बारी पार्टी देते हैं, परन्तु प्रबन्ध यहीं होता है।"

"और साहब !" राय साहब ने कहा, "आदत कुछ ऐसी हो गई है कि दूसरी जगह मज़ा भी नहीं आता।"

"राय साहब ! आपने बिलकुल ठीक फ़र्माया है," सरदार साहब ने अनुमोदन करते हुए कहा, "अपना तो यह हाल है कि यहाँ खाने के बाद घर पर मजा ही नहीं आता और सप्ताह के छः दिन इतवार की याद में बीत जाते हैं।"

"तीन दिन बीते हुए इतवार की याद में और तीन दिन आने वाले की," परवाज़ ने चुटकी ली।

"सज्जनो !" केसरचन्द अतिथियों को सम्बोधित करके बोले, "मैं यह प्रस्तावित करता हूँ कि मेरी प्रिय पत्नी के जन्मदिन की खुशी में आज फ़लाश खेली जाय।"

"स्वीकार। एकदम स्वीकार।" सब चिल्लाकर बोले।

खेल आरम्भ हो गया। बैकुण्ठ फ़लाश खेलना नहीं जानता था। वह खामोश बैठा देखता रहा। चाँद रानी के ताश के आर्ट को देखकर वह विस्मित हो उठा। हर बार उसकी जीत होती। एक घण्टा खेलने के बाद सब लोग हार गए और उसने पचास रुपये जीते।

"बीबी जी ! खाना तैयार है।" नौकर ने आकर कहा।

"मेज़ पर लग गया ?"

"जी !"

"तो ऐसा कहो न, चलिए साहिबान !"

जब सब मेज़ पर डट गए तो दिलेरसिंह बोले, "वैसे हार जाने के बाद खाने में कोई मज़ा नहीं आता, लेकिन···"

"यहाँ मज़े के अतिरिक्त कुछ और महसूस नहीं होता," इन्स्पेक्टर साहब ने वाक्य को पूरा करते हुए कहा।

सब ठहाका मारकर हँस दिए।

"अब देखिए, कितने प्रकार की चीज़ें पकी है," परवाज़ साहब कहने लगे, "पुलाव, मटन, क़ोर्मा, क़ीमा, रोगन जोश, मटर पनीर, मछली, अण्डों का हलवा। भई, कमाल है।"

"और यह सब आपने पकाया है," राय साहब चाँद रानी की ओर संकेत करके बोले।

"यही तो कमाल है," शमसुद्दीन ने दाद देते हुए कहा।

"भला कौनसी इतनी अधिक चीज़ें हैं ?"

"अधिक नहीं ! आप भी तो कमाल करती हैं।" सरदार साहब ने कहा।

"राजा-महाराजाओं के दस्तरखान पर भी इससे अधिक क्या अच्छा खाना होगा ?"

"भगवान् झूठ न बुलवाये," राय साहब ने समर्थन करते हुए कहा। "सेवक को कुछ राजाओं की दावत में जाने का अवसर मिला, परन्तु यहाँ की बात ही दूसरी है।"

"मुझे तो उनकी दावत में वह मज़ा ही नही आया जो यहाँ आता है।"

"इसका मतलब जानते हो, सरदार साहब ?"

"क्या ?"

"वहाँ वह प्यार कहाँ, जो यहाँ मिलता है और बड़ों ने झूठ नहीं कहा कि प्रेम से पिलाया हुआ विष भी अमृत-तुल्य होता है।"

"इन्स्पेक्टर साहब ! आपने क्या बात कर दी !" परवाज़ साहब जैसे फड़क उठे, "वाह-वाह, सुगन्ध ही कितनी······"

"तो आज सुगन्ध ही से पेट भरेंगे, खायेंगे कुछ नहीं ?" मेज़बान बोली।

"आपने इरशाद भी तो नहीं फ़रमाया।"

"इसकी ज़रूरत है ?"

"इसके बगैर साहस ही कैसे हो सकता है ?"

"तो आरम्भ कीजिए।"

"बिस्मिल्ला !" शमसुद्दीन पुलाव से शुरू करते हुए बोले।

खाने के बाद अतिथियों ने धन्यवाद किया और विदा ली।

चाँद रानी बैकुण्ठ को सम्बोधित करके बोली, "ये लोग कितने अच्छे हैं ! ये हमसे कितना प्यार करते हैं ! यहाँ कुछ-न-कुछ लाते ही रहेंगे। इस घर की कोई चीज़ ऐसी नहीं जो हमने स्वयं बाज़ार से खरीदी हो। यह सोफा सेट, मेज़ें, कुरसियाँ, डिनर सेट, आलमारियाँ, पुस्तकें, पलंग और बिस्तर तक सब चीज़ें तोहफ़ों के तौर पर पेश हुई हैं। हम लोग तो सादा जीवन पसन्द करते हे और मेरे पति तो सादगी की पराकाष्ठा तक चले जाते हैं बेचारे। लेकिन मित्रगण इस बात को पसन्द नहीं करते और ज़बर्दस्ती चीज़ें लादते रहते हैं। आज तुमने देखा न ?"

"डार्लिंग !" उसके पतिदेव बोले, "ताली एक हाथ से तो नहीं बजती, तुम भी तो····"

"बस, बस, शुरू हो गए आप ?" चाँद रानी उसे बीच ही में टोक-कर बोली, "डार्लिंग ! यह क्यों नहीं कहते कि यह सब तुम्हारा····"

"अब देखिए आप लगीं मेरी प्रशंसा करने।" अब बीच में टोकने की उसकी बारी थी।

"अब मै चलता हूँ," बैकुण्ठ बोला।

"फिर कब पधारियेगा ?" केसरचन्द ने पूछा।

"कल, और कब ?" श्रीमती जी ने उसकी ओर से स्वयं ही उत्तर दिया।

"जो आज्ञा।"

बैकुण्ठ के लिए यह सारी घटना एक पहेली से कम न थी। घर आकर वह इस पर विचार करने और पहेली को सुलझाने का प्रयत्न करने लगा। केसरचन्द का उसे इस प्रकार घर ले जाना, अपनी पत्नी से परिचय करना और उसका पहली ही भेंट में इस तरह घुल-मिलकर बातें करना, उसके लिए यह सब अजीब था।

वह शायद पच्चीस के लगभग थी। उसका रंग गोरा नहीं कहा जा सकता था, लेकिन उसमें एक आकर्षण था, माधुर्य था। उसका बात करने का ढंग कितना मोहक था ! वह एक-एक वाक्य में, बल्कि एक-एक शब्द में मिठास भरने का प्रयास करती और उसका यह प्रयास असफल भी न जाता। उसके मित्रों की संख्या भी काफ़ी मालूम होती थी। आज ही कितने लोगों से उसकी मुलाक़ात हुई और वे सब-के-सब उसके कितने प्रशंसक थे ! उसे तो ऐसा लगा जैसे उसने उन सब पर जादू किया हुआ था। और वह जादू सिर पर चढ़कर बोल रहा था। न जाने इनके अतिरिक्त उसके और कितने प्रशंसक थे ! परन्तु उसका पति ? उसका विचार आते ही वह विस्मय में पड़ गया। छोटा कद, पतला शरीर, पीला चेहरा। पीला नहीं, मटियाले रंग का। दरअसल उसके चेहरे का कोई रंग ही नहीं था और न उस पर किसी प्रकार के भाव ही प्रकट होते थे। शायद उसके भाव थे ही नहीं। इस कारण उनका चेहरे पर प्रकट होने का प्रश्न ही नहीं उठता था। उसमें कोई जज़्बा तो ज़रूर होगा ? परन्तु कौनसा ? स्वाभिमान का ? नहीं। उसका तो चिह्न तक न था। उसके अन्दर एक पति का-सा स्वाभिमान नाम तक को न था। उसकी पत्नी उसकी उपस्थिति में अपने मित्रों से, अपने प्रशंसकों से भिन्न-भिन्न तोहफे स्वीकार कर रही थी, और वह भी अपने जन्मदिन के त्रैमासिक समारोह पर ! जन्मदिन का त्रैमासिक

समारोह ! वह हँस दिया। ज़िन्दगी में पहली बार उसने यह बात सुनी थी। इसका मतलब यह कि प्रत्येक तीन मास बाद उसका जन्मदिन मनाया जाता है—त्रैमासिक, छ: मासिक, नौ मासिक और फिर पूरा जन्मदिन। एक वर्ष के अन्त में, और हर तीन मास बाद उसके प्रशंसक इसके लिए तोहफ़े लाते हैं—कीमती तोहफे। पार्टी दी जाती है, उनकी ओर से, लेकिन उसके घर। यह भी अजीब बात है। और उसके पति-देव हर बात को यों स्वीकार कर रहे थे जैसे बिलकुल स्वाभाविक हो, प्रकृति का प्रबल सिद्धान्त हो। और प्रशंसक भी कितने प्रकार के ! बूढ़ा रिटायर्ड इन्स्पेक्टर शमसुद्दीन, युवा कवि परवाज़। राय साहब और दिलेरसिंह। प्राय: प्रत्येक धर्म, प्रत्येक वर्ण और हर आयु के लोग वहाँ इकट्ठे होते थे और उनके बीच अब वह स्वयं जा मिला था। और किन हालात में ! कैसे उस दिन केसरचन्द से उसकी भेंट कपूर साहब के घर पर हो गई थी। साधारण तौर पर। और वह उसे अपनी कार में घर छोड़ने आया था—उस लाल रंग की कार में। नहीं, उसका रंग लाल नहीं, लाल और पीले के बीच कोई रंग। बिलकुल उसके अपने चेहरे के समान कार का भी अनिश्चित रंग था। इस भेंट के बाद दोनों की कई बार मुलाक़ात होती रही। आज वह उसे ज़बर्दस्ती घर ले गया और न ही अपनी पत्नी से, बल्कि अपने और उसके मित्रों से भी परिचय करा दिया।

परन्तु क्या यह उसके लिए उचित है कि वह उनके साथ मिलना-जुलना जारी रखे ? शायद नहीं। उसका उनसे क्या सम्बन्ध ? उसका रास्ता उनसे बिलकुल पृथक् था। वह एक साधारण अध्यापक और यह इंशोरेंस एजेण्ट। उसका साधारण वेतन, इनका शानदार निर्वाह। हाँ, उनमें एक सम्बन्ध था, साहित्य का। वह कवि था, वह कथा-कार थी। परन्तु क्या वह सचमुच स्वयं लिखती थी ? हो सकता है। यह तो प्रकृति की देन है। लेकिन उसे अवकाश ही कब मिलता होगा ? अपने पति के काम में तो वह ज़रूर हाथ बटाती होगी। कोई कारण ही

नही कि न बटाती हो। फिर आतिथ्य में कितना समय लगता होगा ! मगर उसे इन सब बातों से क्या मतलब ? वह इन लोगों से पृथक् रहेगा, इनसे बिलकुल नहीं मिलेगा। अपने काम से उसे अवकाश ही कहाँ मिलेगा ? लेकिन है मज़ेदार स्त्री। कितनी अच्छी बातें करती है ! नवयुवकों को सिखाना चाहती है। उसे समाज में चलने-फिरने के योग्य बनायेगी। जैसे इसके लिए भी कोई मन्त्र याद करना होता है। किस समाज में ? समाज एक तो है नहीं। वह कितने ही भागों में विभक्त है। वह किस भाग को समाज समझती है ? जैसे अध्यापक-वर्ग को तो सोसाइटी में शामिल ही नहीं किया जा सकता। उसका तो अपना पृथक् वर्ग है—बन्द और घुटा-घुटा, जिससे सब लोग सब प्रकार की आशाएँ बाँधे रहते हैं। लेकिन एक बात अवश्य है। कवि को अपने गीतों के लिए नये विषय चाहिए, और विषय लोगों से मिलकर ही प्राप्त हो सकते हैं, एकांत में रहकर तो मिल नहीं सकते। ऐसी स्त्री से एक नहीं, अनेक विषय मिल सकते हैं। उसके पास तो कोष धरे होंगे, परन्तु यदि वह इन कोषों में खो गया ? यदि उनकी चमक से उसकी आँखें चुन्धिया गईं तो ? नहीं, वह ऐसा नहीं होने देगा। वह तो केवल तमाशा देखने वालों में होगा, करने वालों में नहीं।

उसकी इन लोगों से प्रायः लगातार भेंट होती रही। केसरचन्द उसे कहीं-न-कहीं मिल ही जाते। उसे कार में बिठाकर उसके अपने घर छोड़ने आ जाते और घण्टा-आध घण्टा उसके पास बैठकर इधर-उधर की गप हाँकते। कभी वह उसे अपने घर ले आता, खाये-पिये बिना उसके लिए वहाँ से आना सम्भव न होता। कभी-कभी पति और पत्नी दोनों उसके घर चले जाते और देर तक वहाँ बैठे रहते, उसकी नई लिखी कविता सुनते और प्रशंसा करते। वह अपनी नई कहानी सुनाती और किसी जासूसी पत्रिका में प्रकाशित कहानी दिखलाती।

उसने महसूस किया कि उसके फालतू समय का अधिक भाग उनकी संगति में बीत रहा है। स्कूल जाने से पहले और स्कूल से आने के बाद

उनसे भेंट हो ही जाती, जैसे यह प्राकृतिक नियम बन चुका था, जैसे यह उनके जीवन का अनिवार्य अंग बन चुका था। अब नगर में उनकी कार में वह सदा ही नज़र आता। केसरचन्द कार को चलाते और वह उसकी पत्नी के साथ पिछली सीट पर बैठता। एक दिन उसने चाँद रानी से अकेले में कहा, "यह कुछ उचित मालूम नहीं होता।"

"क्या ?"

"कि हम दोनों पीछे बैठें और दादा कार चलायें।"

"तो आप कार चलाया कीजिए।"

"लोग समझेंगे, मैं आपका ड्राइवर हूँ।"

"तो अब वे उन्हें ड्राइवर समझते हैं ?"

"हमारे बैठने के अन्दाज से तो यही मालूम होता है।"

"तो क्या हुआ ? जो समझते हैं, समझें। अब लोग तो कुछ-न-कुछ कहते ही रहेंगे। यदि हम दोनों पीछे बैठते हैं तो उन्हें यह कहने का अवसर मिलेगा कि पति को तो ड्राइवर बना दिया और स्वयं एक सुन्दर युवक के साथ बैठी है।"

वह लज्जित हो गया।

"यदि आप गाड़ी चलायें और हम दोनों पीछे बैठें तो वे कहेंगे—ड्राइवर तो खूब मिला। और यदि हम आपके साथ आगे बैठें तो कहेंगे—कितनी निर्लज्ज है ! अपने पति और एक पराये व्यक्ति के साथ कितनी निर्लज्जता से बैठी है ! लोगों की जबान को क्या किया जा सकता है ? इसका तो एक ही उत्तर है कि जो मन में आए करो और लोगों की बातों को सुनो ही नहीं।"

वह मूक हो गया।

एक दिन केसरचन्द ने उससे कहा, "मैं कुछ दिन के लिए बम्बई जा रहा हूँ। चाँद एकाकीपन महसूस करेगी। आप कुछ दिनों के लिए हमारे घर क्यों न आ जायँ ?"

"परन्तु...."

"परन्तु-वरन्तु क्या ? आप अकेले तो हैं। किराये का मकान है। क्या अन्तर पड़ेगा ?"

"मेरा मतलब..."

"अरे भई, मतलब मैं समझता हूँ। तुम तो आ जाओ।"

और उसे विवश होकर आना पड़ा।

उसे एक पृथक् कमरा तो मिल गया, मगर पृथकता जाती रही। घर पर उसका कोई अपना समय न था, और स्कूल में तो इसकी आशा ही न हो सकती थी। बैड-टी से लेकर रात के खाने तक उसे सब-कुछ चाँद रानी के साथ लेना होता और शेष समय उसके साथ गुज़ारना होता। रात ग्यारह बजे तक फ़लाश चलती। इतवार को और छुट्टी के दिन भी ताश चलता। शाम को वे प्रायः सिनेमा देखने जाते। सिनेमा जाने से पहले वह उसे किसीके घर ले जाती। अब वह जहाँ भी होती, वह साथ होता। जब लोग उसके विषय में पूछते, वह कहती—उसका दूर के रिश्ते का भाई है। लेकिन स्त्रियाँ ऐसे उत्तर से कब सन्तुष्ट होतीं !

"यह तो यहाँ कई वर्षों से है, रिश्ता अब पैदा हुआ।"

"अब पैदा नहीं हुआ, उसका पता अब चला है।"

इसका उत्तर कोई क्या देती ? ज़बान से तो सब ख़ामोश रहतीं, लेकिन दिल की तसल्ली न होती।

और चाँद रानी दूसरों के दिल की परवाह ही कब करती थी। उसे अपने दिल से वास्ता था और वह बिलकुल सन्तुष्ट थी। उसका दिल हमेशा दूसरों पर विजय पाने का इच्छुक था। जब से उसने बैकुण्ठ को देखा था, वह उसके लिए बेचैन थी। उसे पाने के लिए उसने प्रयत्न किया और वह अकारथ नहीं गया। बैकुण्ठ नौजवान था, सुन्दर था, अकेला था। उसे इससे बढ़कर चाहिए ही क्या था ? उसे बाज़ार के खाने से छुट्टी मिली। न ही केवल खाना बहुत अच्छा था, बल्कि उसकी देखभाल में भी कोई कमी न रहती। लेकिन आरम्भ में उसके हृदय में झिझक अवश्य रहती। वह एकान्त में उसकी उपस्थिति में शर्म महसूस

करता । एक रात फ़लाश खेलने के बाद, चाँद रानी का दायाँ पाँव उसके पाँव पर जा पड़ा। एक-आध मिनट तो वह खामोश बैठा रहा, लेकिन फिर यह समझकर कि शायद वह इसका एहसास नहीं कर रही, उसने अपना पाँव सरकाने की कोशिश की। अब चाँद ने उसका हाथ अपने दोनों हाथों में ले लिया और बोली, "आप अजीब तरह के नवयुवक हैं।"

"क्या सब नवयुवक ऐसे नहीं होते ?" उसके मुँह से सहसा निकल गया।

"बिलकुल नहीं," जैसे उसे इसका गहरा अनुभव हो, "मेरी नज़र से आज तक कोई ऐसा पुरुष नहीं गुज़रा जो स्त्रियों से शर्माए। लजाना पुरुषों का नहीं, स्त्रियों का काम है।"

परन्तु वह शर्म से पानी-पानी हो रहा था।

"और आपने तो स्त्रियों को भी मात दे दी है।"

"दरअसल........"

"तुम्हें ट्रेनिंग की जरूरत है," वह उसे बीच ही में टोककर बोली।

वह मुस्करा दिया।

"जब मैंने आपको पहले दिन इस मुहल्ले में देखा तो मेरे दिल ने कहा, आप और किसीके नहीं हो सकते।"

वह खामोश रहा, परन्तु आश्चर्यचकित—विवाहित होकर वह ऐसी बातें कर रही है। क्या उसका पति...........

"तुम दलाल साहब के विषय में सोच रहे हो ?"

वह चुप रहा।

"मैं समझ गई थी, लेकिन वह मेरे मामले में बिलकुल हस्तक्षेप नहीं करते।"

"नहीं करते ?" वह विस्मित हो उठा।

"बिलकुल नहीं," वह उसका हाथ सहलाती हुई बोली।

"मैं कुछ नहीं समझ सका।"

"ज़रूरत भी नहीं," वह उसका हाथ दबाती हुई बोली, "हमारा नाता इस शर्त पर हुआ था।"

"कि वह आपके मामले में हस्तक्षेप नहीं करेंगे ?'

"हाँ।"

"और आप उनके मामले में ?"

"उसकी नौबत ही नहीं आयेगी।"

"मतलब ?"

"आप बहुत भोले हैं।"

वह खामोश हो गया।

इसके बाद उसके दिल में कभी ऐसा प्रश्न पैदा नही हुआ। यदि पदा हुआ भी, तो वह उसके चेहरे पर आया न ज़बान पर।

बम्बई से लौटने पर बैकुण्ठ को अपने घर स्थायी रूप से ठहरे देखकर, केसरचन्द बहुत प्रसन्न हुए। उसे सम्बोधित करके बोले, "भाई, तुम्हारे यहाँ आने पर मुझे कितना सहारा मिल गया ! मैं तो घूमने-फिरने वाला व्यक्ति हूँ। आज यहाँ, कल वहाँ। चाँद अकेले में बहुत घबराती है। अब उसे शिकायत का मौक़ा नही रहेगा।"

"और आपको घूमने का खूब मौका मिलेगा," चाँद कमरे में प्रविष्ट होती हुई बोली।

"डार्लिंग ! तुम तो जानती हो कि मै काम के बिना कभी बाहर नहीं जाता। तुमसे दूर जाकर दिल भी तो उदास हो जाता है।"

"बात बनाने में आप खूब चतुर हैं," वह गर्दन को बल देती हुई बोली, "और बम्बई से मेरे लिए क्या लाये हैं—एक अँगूठी !"

"और तुमने माँगी भी तो अँगूठी ही थी।"

"इसलिए कि तुम्हें क्यों परेशान करूँ ? हाँ, हुआ कुछ प्रबन्ध ?"

"प्रबन्ध ? भला मैं क्या कर सकता हूँ ? मैं इस योग्य कहाँ ?"

"मैं भूल ही गई थी। अच्छा शाम को इंस्पेक्टर साहब को आने दीजिए।"

जब शाम को शमसुद्दीन पधारे, वह अपने कमरे में बिस्तर पर लेटी हुई थी। उसके समीप कुरसी पर बैठते हुए, वह उसे सम्बोधित करके बोले, "क्या दुश्मनों की तबियत नासाज़ है ?"

वह चुप रही।

"मैं अर्ज़ कर रहा हूँ कि क्या कुछ तकलीफ़ है ?"

"आपको इससे क्या ?"

"इसका मतलब है, तबियत ज्यादा खराब है।"

"आपकी ओर से कोई मर जाय, फिर भी कोई बात नहीं।"

"लेकिन, सरकार ! मैं यहाँ था ही कब ? एक सप्ताह बाद लौटा हूँ और घर पर कपड़े बदलकर सीधा यहाँ आ रहा हूँ।"

"लेकिन आप तो कह रहे थे, दो दिन में लौट आएँगे।"

"क्या करता, काम ही ऐसा आन पड़ा।"

"क्या काम था ?"

"आप जानती हैं, इस बार मैं रिटायर हो रहा था......"

"रिटायर तो आप तीन वर्ष पहले हो चुके थे।"

"लेकिन अधिकारियों की कृपा से सर्विस बढ़ा दी गई थी। तीन वर्ष तो बीत चुके। लेकिन इस बार कुछ लोगों ने मेरे खिलाफ एक लम्बी-चौड़ी दरख्वास्त दे दी कि इस बूढ़े को तौसी देने से एक नौजवान के अधिकार मारे जाते हैं, इसलिए ऐसा करना अन्याय है।"

"बड़े पाजी हैं !" चाँद रानी लेटे-लेटे बोली ।

"अब डार्लिंग ! तुम ही बतलाओ, क्या मैं बूढ़ा हूँ ?"

"कम-से-कम दिल से तो नहीं ।"

"शक्ल से हूँ ?"

"यह मैंने कब कहा ?"

"तब सही ।" इंस्पेक्टर साहब इतमीनान की सांस खींचकर बोले ।

"तो फिर दिल्ली क्या कर आये ?"

"सब ठीक कर आया हूँ, डियर !" वह उसका हाथ अपने दोनों हाथों में लेते हुए बोले, "समझदार आदमी हिम्मत का दामन हाथ से न छोड़े तो क्या नहीं हो सकता ?"

"काफ़ी रुपया खर्च करना पड़ा ?"

"तो डार्लिंग, रुपया कमाया किसलिये जाता है ? रुपया वही जो मुश्किल में काम आये ।"

"और मित्र ?"

"जो समय पर काम आये ।"

चाँद रानी ने एक लम्बी साँस वायु में छोड़ी ।

"आखिर बात क्या है ?"

"इंस्पेक्टर साहब ! आज हम पर भी आन पड़ी है ।"

"क्या ?"

"एक मुसीबत ।"

"बात क्या है ?"

"दिनों का फेर है ।"

"लेकिन मैं भी तो सुनूँ ।"

"परसों डिग्री हो रही है ।"

"आप पर ?"

"इन पर ।"

"कितने की ?"

"पाँच हज़ार की।"

"ओह !"

"लेकिन तीन हज़ार का तो इन्होंने प्रबन्ध कर लिया है, बाक़ी दो हज़ार के लिए परेशानी है। यदि कल दस बजे तक प्रबन्ध न हो सका तो नाक कट जायगी। भगवान् न करे कि तंग आकर यह आत्म-हत्या ही न कर लें।"

उसकी आँखों में दो बड़े-बड़े आँसू लटक रहे थे।

"नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।"

इंस्पेक्टर साहब अपनी जेब से रूमाल निकालकर उसकी आँखें पोंछते हुए बोले, "अल्लाह न करे कि ऐसी नौबत आये और फिर वह दोस्त ही क्या जो समय पर काम न आये। मैं कल शाम तक इन्तज़ाम करवा दूँगा।"

"मै तो पहले ही जानती थी कि आपके अतिरिक्त हमारे दुःख के समय कौन काम आ सकता है, लेकिन यह शर्म से चुप रह गए।"

"अजी साहब ! अपनों से शर्म कैसी ? अगर बंदा आपकी ऐसी मामूली-सी ख़िदमत भी न कर सका तो फिर इस ज़िन्दगी का क्या फ़ायदा ?"

"न जाने आपके उपकारों का कैसे बदला चुका सकती हूँ," वह बिस्तर से उठती हुई बोली।

"अजी सरकार ! आपकी कृपा पहले ही कौनसी कम है ? मैं तो आपका बहुत ममनून हूँ। अब आपकी तबियत कैसी है ?"

"आगे से अच्छी है, ज़रा सिर में दर्द है।"

"तो लाइए, सिर दवा दूँ।"

"नहीं, आप क्यों कष्ट करते हैं ?"

"कष्ट ? आप इसे कष्ट फ़रमाती हैं। सरकार ! यह तो इज्ज़त अफ़ज़ाई है जो मुझे ख़िदमत का मौक़ा दिया जा रहा है।"

"जैसी आपकी मरज़ी।"

....

इंस्पेक्टर साहब के चले जाने के बाद परवाज़ तशरीफ़ लाये।

"नमस्ते !"

वह खामोश रही।

"क्या नाराज़ी है ?"

फिर भी कोई उत्तर न मिला।

"आखिर मैं कारण तो जान सकूँ।"

"कारण मुझसे नहीं, अपने-आपसे पूछिए।"

"उत्तर नहीं मिला, इसीलिए आपसे पूछ रहा हूँ।"

"परन्तु निराशा के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं आएगा।"

"जुर्म सख्त मालूम होता है।"

"आप इतने दिन कहाँ रहे ?"

"म......म........मैं.......मेरी तबियत खराब हो गई थी।"

"और सुना है, अब बिलकुल ठीक हो गई है।" चाँद रानी बोली।

"मतलब ?"

"मतलब कि नुस्खा मिल गया है।"

"किसीने आपको ग़लत सूचना दे दी।"

"मुझे गलत सूचना नहीं मिलती," चाँद रानी रौब से बोली, "आग के बिना कभी धुआँ नहीं उठता।"

"लेकिन धुआँ किसने देखा ?"

"किसने नहीं देखा ? आज कौन इस बात को नहीं जानता कि आपके और रामकली के बीच.......।"

"अजी साहब ! यह खबर तो किसी दुश्मन ने उड़ाई होगी।"

"किसका दुश्मन ? आपका या उसका ?"

"दोनों का।"

"हो सकता है," चाँद रानी बोली, "वह अपनी शत्रु तो है ही, मित्र तुम्हारी भी नहीं।"

"कौन ?"

"रामकली, और कौन ?"

"क्या उसने······।"

"जी श्रीमान जी, उसने स्वयं अपनी जबान से कहा कि उसने एक कवि के दिल पर काबू पा लिया है और कवि भी ऐसा······।"

"बस, बस, बस," वह उसकी बात काटकर बोला, "उसे गलत-फहमी हो गई है, दो-चार बार उसके घर जाने से वह अपने विषय में गलत समझ बैठी।"

"लेकिन आपके बारे में ठीक समझी।"

"क्या ?"

"कि आप उसके हाथों बिक गए हैं।"

"तौबा।"

"अब तौबा करने से क्या होता है, परवाज़ साहब ! कवि का हृदय ठहरा। अपनी कविता के बारे में प्रशंसा के कुछ शब्द सुनने के लिए कितना आतुर रहता है ! और जो इस आतुरता को दूर कर दे, वह फिर दिल का मालिक ही बन बैठता है।"

"ऐसी बात तो नहीं।"

"आपके ऐसा कहने से बात टल नहीं सकती, परवाज़ साहब !"

"अच्छा, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अब कभी उसके घर कवि-सम्मेलन में नहीं जाऊँगा।"

"इसका मतलब यह हुआ कि कवि-सम्मेलन के अतिरिक्त आप वहाँ जरूर जाया करेंगे।"

"कवि-सम्मेलन के अतिरिक्त ? नहीं, बिलकुल नहीं। क्यों जाऊँगा? आखिर वहाँ है ही क्या ? उसमें है ही क्या ? न जाने वह अपने-आपको क्या समझती है ?"

"जो आप-सरीखे प्रशंसक समझाने की कोशिश करते हैं।"

"लेकिन मैंने तो आपसे वादा कर लिया। आप देखेंगी कि आगामी

इतवार को मैं बिलकुल उसके घर नहीं जाऊँगा।"

"आगामी इतवार को फिर कवि-सम्मेलन हो रहा है?"

"और इसमें वह केवल कृष्ण को बुलाने की सोच रही है। वह यह नहीं जानती कि वह उसके घर जाने को तैयार न होगा।"

"कौन केवल कृष्ण? क्या कोई नये साहब आये हैं?"

"आप नहीं जानतीं? नये डी० एस० पी० हैं।"

"मुमताज़ के स्थान पर आये होंगे?"

"हाँ, और मुमताज़ से कई गुना तेज़ हैं।"

"किस मामले मे?"

"हर मामले में," परवाज़ ने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, हर मामले में नहीं। केवल एक बात में उससे पीछे हैं, या यह कहिए कि इसमें उनकी रुचि ही नहीं।"

"और किस बात में रुचि रखते हैं?

"साहित्य में।"

"पुलिस में होते हुए भी?"

"जी! और खूब कविता लिखते और पढ़ते हैं।"

"गाकर?"

"गाकर।"

"आपने उन्हें कहाँ सुना?"

"मौलाना माजिद, विकास-मन्त्री के घर।"

"बहुत लोग थे?"

"बहुत तो नहीं, लेकिन नगर के प्रतिष्ठित और माननीय व्यक्ति आमन्त्रित थे। वहाँ शाद साहब ने अपनी धाक बिठा दी।"

"क्या कहा, शाद तखल्लस करते हैं?"

"जी।"

"फिर तो उनकी कविता अवश्य किसी पत्र-पत्रिका में पढ़ी होगी, अब याद आया," वह कुछ सोचती हुई बोली, "उनकी फोटो भी कई बार

छपी है, जवान और सुन्दर हैं न ?"

"कैसे कहूँ कि नहीं ?"

"ठहरिए, मैं अभी दिखलाती हूँ," वह उठती हुई बोली। अन्दर से वह कुछ पत्र-पत्रिकाएँ उठा लाई और उनके पृष्ठ पलटने लगी, "यह रही," वह एक मासिका के विशेषांक में प्रकाशित चित्र दिखलाते हुए बोली, "यही हैं न ?"

"बिलकुल नहीं।"

'मैंने कहा था न कि मेरे मस्तिष्क में वह तस्वीर चक्कर लगा रही थी।

"और दिल में ?"

"दिल में······ ।"

"शायद अब चक्कर लगायेगी," उसने वाक्य को पूरा करते हुए कहा।

"और आपके दिल में जलन शुरू हो जायगी।"

"यदि न हो तो अप्राकृतिक-सा होगा।"

"आपकी बात पर विश्वास भी तो नहीं होता।"

"हाँ साहब ! हमारी बात पर क्यों विश्वास आने लगा ? और अब तो बिलकुल नहीं आयेगा। अब तो शाद साहब ही की बात होगी, उन्हीं का वर्णन होगा।"

"लोगों में तो आजकल उन्हीं की चर्चा होगी ?"

"मेरे विचार में और किसीकी तो चर्चा ही नहीं।"

"उन्होंने सबको मात दे दी ?"

"हाँ, साहब ! पराजय को स्वीकार करना ही होगा।"

"कौन ?" बाहर, क़दमों की आवाज सुनकर चाँद रानी बोली और फिर स्वयं ही कहने लगी, "वे दोनों आ रहे हैं।"

"कौन, परवाज़ साहब पधारे हुए हैं।" दलाल ने कमरे में प्रविष्ट होते हुए कहा।

"नमस्ते !" परवाज़ साहब बोले, "कहिए, बैकुण्ठ जी ! क्या खबर है ?"

"मैं आपसे पूछने वाला था।"

"मुझसे ? साहब ! इतनी देर से मरम्मत हो रही है। अगर कमी रह गई हो तो आप पूरी कर सकते हैं।"

"आपका जुर्म भी तो कम नहीं था।" केसरचन्द ने कहा।

"दण्ड भी तो कम नही मिल रहा।"

"क्या ?" बैकुण्ठ ने पूछा।

"आज रात हमारे साथ खाना खा रहे हैं।"

"यह तो मीठा दण्ड है।"

"कवि हैं न।" चाँद बोली, "भावुक हृदय को घोर दण्ड देने में उस के टूट जाने का भय रहता है।"

"आपका मतलब है कि इनका हृदय अभी तक अटूट है ?"

"यह तो आप रामकली से पूछिए," चाँद रानी चोट करती हुई बोली, "हाँ, यहाँ सालिम (अखण्ड) दिल की नहीं, मुर्ग-मुसल्लम की बात कीजिए।"

"अहो भाग्य !" परवाज बोले, "आज किसका मुँह देखा कि इतना उत्तम भोजन मिल रहा है।"

जब सब खाने की मेज़ पर जम गए, तो चाँद अपने पति को सम्बोधित करके बोली, "डार्लिंग ! तुमने शाद साहब का कभी जिक्र ही नहीं किया।"

"डियर ! मैं पिछले कई दिनों से सोच रहा था कि बात करूँ, लेकिन·······"

"लेकिन दिल ने आज्ञा न दी, यही न ?"

"डार्लिंग ! क्या बात कर रही हो ? मैं और तुम्हारे मामले में अपने दिल को कभी हस्तक्षेप करने दूँ ? आज तुम्हारी तबियत खराब मालूम होती है।"

"आपके लिए फर्क भी क्या पड़ता है ?"

"देखो, ऐसी बात न करो। तुम्हारी खुशी के लिए तो·······"

"मैं आकाश के तारे तोड़ लाऊँ यही कहने जा रहे थे ?"

"अब तुम तो मेरे दिल की जानती हो।"

"तुम्हीं मेरे दिल की नहीं जानते।"

"जनता हूँ।"

"क्या ?"

"कि इतवार को कवि-सम्मेलन हो रहा है।"

"तुम कितने अच्छे हो ! इसी कारण मैं तुम्हें पसन्द करती हूँ।"

"केवल इसी कारण ?" परवाज़ के मुँह पर ये शब्द आकर रुक गए

"है न परवाज़ साहब ?"

"अजी साहब ! दलाल जी से बढ़कर आपके दिल की बात और कौन जान सकता है ?"

"मुर्ग़ कैसा पका ?"

"आज तो बहुत स्वादिष्ट है। आप ही ने बनाया होगा।"

"और बेचारे जॉर्ज को क्या जाँच ?" केसरचन्द बोले।

"उस दिन भी मुर्ग़ बनेगा ?" बैकुण्ठ ने पूछा।

"केवल मुर्ग़ ? यह कैसे हो सकता है ?" चाँद ने कहा।

"बहुत उमदा डिनर होगा। अबकी सरदार दिलेरसिंह की बारी है।"

"कितने लोग आमन्त्रित किये जायँगे ?"

"तीस।"

"और प्रोग्राम ?"

"वही जो होता है—काव्य-कविता, गाना-बजाना।"

"गाने का कार्यक्रम पहले से अच्छा होना चाहिए," चाँद ने कहा।

"उस्ताद नत्थू की पार्टी को बुला लेंगे।"

"पैसे बहुत माँगता है," परवाज़ बोले।

"तो क्या हुआ ? आपने एक मास से डिनर भी तो नहीं खिलाया।"

"इसका मतलब यह है कि······"

"गाने का प्रबन्ध आपकी ओर से होगा, समझे ?"

"समझा," बड़ी कठिनाई से कौर को गले के नीचे उतारते हुए बोले।

"नगर के सब अधिकारियों को बुलाना होगा।"

"जो आज्ञा," केसरचन्द ने उत्तर दिया।

"और उनमें कुछ रिटायर्ड अधिकारी भी सम्मिलित हैं।"

"यह कहने की ज़रूरत है भला ?"

"शाद साहब को निमन्त्रण देने कौन जायगा ?"

"जिसे आदेश दिया जायगा।"

"परवाज़ साहब !········"

"अजी साहब ! मै भला किस काम का ? आप स्वयं········"

"आप भी कमाल करते हैं। मैं भला पहली ही बार बिना परिचय के कैसे जा सकती हूँ ?"

"उन्हें बुलाने का मेरा ज़िम्मा है," दलाल साहब बोले।

"लेकिन दलाल साहब ! उन्हें लाना इतना आसान नहीं, यह बतलाये देता हूँ।" परवाज़ उसे चेतावनी देते हुए कहने लगे।

"पुलिस वाले हैं, इसलिए ?"

"इसलिए कि वह जल्द प्रभावित नहीं होते," परवाज़ ने उत्तर दिया, "उनके विषय में यह बात छिपी नहीं कि जहाँ वह उच्च कोटि के कवि और मिलनसार व्यक्ति हैं, वह स्पष्टवक्ता और ईमानदार भी बहुत हैं।"

"तो यहाँ उनके ईमान को कौन बिगाड़ रहा है ?" चाँद रानी क्रोधावेश से बोली।

"आप क्रुद्ध हो गईं। लेकिन मेरा कहने का यह मतलब है कि

सरकारी अफ़सर होने के नाते, बिना पूर्व-परिचय, डिनर के लिए कैसे सहमत होंगे ?"

"नहीं होंगे ! जैसे कोई मज़ाक है। हम बुलाने जायँ और वह न आएँ। हमने ज़िन्दगी-भर और काम ही क्या किया है ?"

"डार्लिंग ! यह तुम्हारी परीक्षा है।"

"चिन्ता न कीजिए, डियर ! सेवक इसमें पूरा उतरेगा।"

"तो तुम पहले सब तैयारी कर लो। परसों इतवार है। कल उन्हें निमंत्रण दे देना।"

"जो आज्ञा।"

"अच्छा, मैं चलता हूँ।" परवाज खाने से निवृत्त होकर कहने लगे।

"आपने मान लिया ?"

"जी, अच्छा नमस्ते !"

"नमस्ते !"

और जब वे चले गए तो केसरचन्द ने चाँद रानी से पूछा, "इन्स्पेक्टर साहब आये थे ?"

"और तुम क्या समझते हो ?"

"काम बना ?"

"न बनने का कारण ?"

"डार्लिंग ! तुम कितनी अच्छी हो ! अभी दिलेरसिंह आयेंगे तो उन्हें याद दिला देना।"

"बीमा के केसेज़ के बारे में न ?"

"हाँ, कम-से-कम पचास हज़ार के केस चाहिए।"

"और तुमने आज क्या किया ?"

"आज तो मैंने एक ऐसे व्यक्ति को फाँसा जो हमें पाँच केस देगा।"

"कौन है वह ?"

"नेशनल कॉलेज का अकाउण्टेण्ट।"

"क्या नाम है उसका ?"

"युद्धवीर।"

"समझ गई। वही, जिसकी नाक तोते की नाक की तरह तीखी है?"

"तुमने उसे पहले कहीं देखा है ?"

"तुम्हारे ही साथ।"

"याद आया," वह कुछ सोचते हुए बोला, "मै तो भूल ही गया था। उसने वादा किया है कि वह पाँच केस तो अभी देगा।"

"और बाद में ?"

"मैंने उसे एजेंट बना लिया है।"

"परन्तु एक प्राइवेट कॉलेज का अकाउण्टेण्ट क्या कर सकता है ?"

"वही तो कर सकता है ! सरकारी कॉलेज के हैडक्लर्क की कौन नहीं परवा करेगा ?"

"और उसकी क्यों परवा करेगा ?"

"डियर ! वेतन तो उसको बाँटना होता है न।"

"तो क्या हुआ ?"

"प्राइवेट कॉलेज में ज़रूरी नहीं कि वेतन पहली तारीख को बँटे। हो सकता है दस को मिले अथवा मास के अन्त में।"

"तो ?"

"बस जिसे वेतन समय पर लेना हो, उसके लिए अकाउण्टेण्ट को प्रसन्न रखना कितना ज़रूरी है।"

"यह बात है !" चाँद रानी विस्मित होकर बोली, "इसका तो यह मतलब हुआ कि हम दूसरे सरकारी दफ्तरों में भी कुछ ऐसे व्यक्तियों को हाथ में कर लें।"

"आप ठीक फर्माती ह। मैंने कुछ ऐसे व्यक्तियां से मित्रता गाँठ ली है।"

"क्या वे ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें मुझसे नही मिलाया जा सकता ?" उसने गम्भीरतापूर्वक पूछा।

"डियर ! क्या आज तक कोई मेरा ऐसा जानकार है जिसे मैंने

तुमसे न मिलाया हो ? वे तो स्वयं यहाँ आकर नाक रगड़ेंगे ।"

वह मुस्करा दी ।

"कौन ?" बाहर दरवाजे पर दस्तक सुनकर केसरचन्द बोले ।

"दिलेरसिंह ।"

"अच्छा डियर ! अब मैं और बैकुण्ठ तो चलते हैं ।"

"और दिलेरसिंह ?"

"अब उनसे तुम्ही निपट लेना । हमें तो नींद आ रही है । आज बहुत थक गए हैं ।"

"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी," चाँद बोली, "जॉर्ज से कहना कि दरवाज़ा खोल दे ।"

"जो आज्ञा ।"

और वे दोनों उठकर अपने-अपने कमरे में चले गए ।

अगले दिन केसरचन्द दलाल, मि० केवल कृष्ण डी० एस० पी० के बंगले पर पहुँचे और अपना विजिटिंग कार्ड अन्दर भिजवाया। अपना परिचय देने और कुछ देर इधर-उधर की बातें करने के बाद कहने लगे, "आज आपको एक कष्ट देना चाहता हूँ।"

"कष्ट, मुझे ! क्या कोई डाका पकड़वायेंगे ?"

"नहीं। अपने घर आने का निमन्त्रण देने आया हूँ।"

"डाका डलवाने ?" उन्होंने हँसकर पूछा।

"नहीं," वह झेंपकर बोला, "आप डाका कैसे डाल सकते हैं ? मैं तो दावत पर बुलाने आया हूँ।"

"कैसी दावत ?"

"आपके सम्मान में मेरी पत्नी एक पार्टी दे रही हैं।"

"आपकी पत्नी, मेरे सम्मान में ?" वह बहुत आश्चर्यचकित हो रहा था।

"दरअसल वह एक विख्यात कथाकार है और आप एक सुप्रसिद्ध कवि। इस बहाने आपसे मिलना चाहती हैं।"

"आपकी पत्नी मुझसे मिलना चाहती हैं ? इसके लिए उन्होंने यह बहाना ढूँढ़ा। मैं समझ नहीं सका।"

"असल में कुछ कवि लोग आपसे इस बहाने मिलना चाहते हैं।"

"लेकिन साहब ! मुझे मिलने के लिए बहाने क्यों ढूँढ़े जा रहे हैं ?"

"वास्तव में," वह झेंपकर बोला, "मेरी पत्नी का छमाही जन्म-दिन भी है। बहुत से दूसरे अतिथियों को भी बुलाया है। आज आपको भी कष्ट दिया जा रहा है।"

"देखिए साहब!" केवल कृष्ण ने उत्तर दिया, "मैं जन्मदिन का कष्ट नहीं उठाना चाहता। फिर आपकी पत्नी के जन्मदिन का और विशेषत: छमाही जन्मदिन का।"

"साहब! मेरी पत्नी बहुत हठ कर रही है।"

"जन्मदिन मनाने के लिए?"

"नहीं साहब! आपको बुलाने के लिए।"

"मुझे? क्यों? मुझे जन्मदिन से क्या सम्बन्ध? और फिर आपकी पत्नी से क्या वास्ता?"

"आप कवि हैं, साहित्यिक हैं और नगर के एक प्रतिष्ठित अधिकारी हैं।"

"अधिकारी होने के नाते तो मेरा आना और भी अनुचित है। फिर आप बिज़नेसमेन हैं, चाहे बीमे का बिज़नेस ही क्यों न हो।"

"लेकिन साहब! मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वहाँ बीमे के सम्बन्ध में कोई बात न होगी।"

"आप कैसी बातें कर रहे हैं?"

"साहब! यही दर्खास्त कर रहा हूँ कि आप अवश्य तशरीफ लाइए नहीं तो········"

"नहीं तो क्या?" केवल कृष्ण क्रुद्ध होकर बोले।

"नहीं तो मेरी पत्नी नाराज हो जायँगी।"

"मुझसे?"

"मुझसे।"

"तो फिर उन्हें मनाइए।"

"लेकिन मुझसे मानेंगी नहीं, यदि आप·········"

"देखिए मिस्टर दलाल!" केवल कृष्ण उसे डाँटकर बोले, "मुझे

सरकार से इसलिए पैसे नहीं मिलते कि आपकी पत्नी को मनाने आऊँ। दूसरे, आपको यह बात भी न भूलना चाहिए कि आप मुझे खाना खिलाने की रिश्वत पेश कर रहे हैं और यह एक जुर्म है। लेकिन इसके पूर्व कि मैं आपके विरुद्ध कोई कार्यवाही करूँ, आपको यहाँ से तशरीफ़ ले जाने का आदेश देता हूँ।"

"लेकिन साहब! मैं यह कहना भूल गया कि आज की दावत पर शुभनाथ सक्सेना और प्रो० अमजद भी तशरीफ़ ला रहे हैं और मुशायरे के अतिरिक्त गाने-बजाने का भी प्रबन्ध है।"

"आपका मतलब है कि जहाँ शुभनाथ सक्सेना और प्रो० अमजद तशरीफ़ ले जायँ, वहाँ मेरा जाना भी अनिवार्य हो जाता है?"

"मेरा मतलब........."

"और दूसरे, मैं गाने-बजाने का इस भयानक हद तक शौक़ीन नहीं हूँ। समझे आप?"

"लेकिन साहब! मेरी पत्नी........"

"मेरी पत्नी, मेरी पत्नी क्या लगा रखा है? पत्नी! पत्नी! आपकी पत्नी न हुई, नूरजहाँ हुई। आप यहाँ से तशरीफ़ ले जाइए, फ़ौरन!"

और जब मिस्टर केसरचन्द, बैग बग़ल में दबाए और हैट हाथ में सँभाले, दरवाज़े में से जा रहे थे, उनके कान में ये शब्द पड़े, "नानसेंस! फ़ुलिश! पत्नी न हुई, सौंठ की गाँठ हुई।"

"इतना घमण्डी है वह," चाँद रानी अपने पति से सारी बात सुनकर बोली।

"बदतमीज़ कहीं का," शमसुद्दीन ने कहा।

"अपने-आपको बहुत बड़ा शायर समझता है।"

"और बड़ा अफ़सर।"

"अजी, ऐसे अफ़सर हमने बहुत देखे हैं," इंस्पेक्टर साहब बोले, "कल का छोकरा न जाने अपने-आपको क्या समझ बैठा है?"

"लेकिन क्या इस अपमान को इस प्रकार खामोशी से सहन किया जायगा ?"

"खामोशी से ! आप ज़रा इंतजार तो कीजिए। मैं उसके होशो-हवास ठीक कर दूँगा।" शमसुद्दीन ने तसल्ली देते हुए कहा।

"लेकिन कैसे ?"

"वह मैंने सब सोच लिया है।"

"क्या उसके बारे में मैं नहीं जान सकती ?"

"क्यों नहीं ? हम एक अख़बार को खरीद लेंगे।"

"अख़बार !"

"हाँ। हफ्तरोज़ा अख़बार (साप्ताहिक पत्र)।"

"उसे ऐडिट कौन करता है ?"

"मातादीन गौहर।"

"मातादीन गौहर ?"

"हाँ। बड़ा माहिर है ऐसे मामलों में, गाली देने में अपने शहर में उससे बढ़कर कोई नहीं। जिसे चाहो गाली दिलवा लो, जैसी चाहो दिलवा लो। बड़े-बड़े अफ़सर उसके नाम से घबराते हैं। उसका नाम आते ही उनके पसीना छूटने लगता है।"

"परन्तु अफ़सरों को ऐसे आदमी से डरने का क्या कारण ?" चाँद ने पूछा।

"क्या कारण नहीं ?" शमसुद्दीन ने उत्तर दिया, "कौन है जो कहीं-न-कहीं ग़लती नहीं कर बैठता ? कौन है जो सौ फीसदी (शत-प्रतिशत) ईमानदार है ? फिर मिलने पर पैसा किसे बुरा लगता है ? कुछ ऐसे हैं जो अपने काम में सुस्त हैं। कुछ फ़िरक़ापरस्ती (साम्प्रदायिकता) के शिकार हैं। ऐसे भी हैं जो दफ़्तर का काम ही नहीं कर पाते और जिनके पास वर्षों फ़ाइलों के ढेर पड़े रहते हैं। कुछ फाइलों को तो दीमक खा जाती है। मैं कुछ ऐसे अधिकारियों को जानता हूँ जो दफ़्तर के समय शिकार खेलते हैं।"

"शिकार !" बैकुण्ठ ने पूछा।

"जी हाँ, शिकार।"

"किसका शिकार ?"

"किसका शिकार नहीं खेलते वे ?" इन्स्पेक्टर साहब बोले।

"तो फिर सरकार का काम कैसे चलता है ?"

"काम की किसे चिन्ता है ? काम के बारे में सोचने की फ़ुरसत (अवकाश) ही किसे मिलती है ? यदि काम करें तो मातादीन को रोज़ी (आजीविका) कैसे हासिल हो ? उसे लिखने के लिए सामग्री कहाँ से मिले ? अब भगवान् भी तो सबकी सोचता है।"

"तो मातादीन इन बातों का फ़ायदा उठाता है ?"

"पूरी तरह। और क्यों न उठाये ? जब उसे लिखना आता है, क्यों न लिखे ?"

"प्रकृति की इस देन का वह इस प्रकार दुरुपयोग करता है ?" बकुण्ठ बोला।

"रोटी तो किसी तरह कमा खाए मछन्दर।"

"ऐसा आदमी हमारे लिए बहुत उपयुक्त है।"

"यही तो मैं अर्ज़ कर रहा हूँ। और जब वह आपके शाद साहब के बारे में नई-नई बातें लिखेगा तो उनके होश ठिकाने आ जायँगे।"

"लेकिन उनके बारे में उसे बातें कैसे मालूम होंगी ?"

"बातें मालूम नहीं की जातीं, घड़ी जाती हैं।"

"तो वह बातें घड़ता भी है ?"

"ख़ूब ! हाथ कंगन को आरसी क्या ? आप स्वयं देखेंगी।"

"परन्तु केवल घड़ने से बात कैसे बनेगी ?"

"कुछ ठीक बातें भी लिखी जायँगी।"

"वे कहाँ से मालूम होंगी ?"

"गौरीशंकर से।"

"वह कौन है ?"

"केवल कृष्ण का साथी।"

"वह भी डी० एस० पी है?"

"जी! और उसका हरीफ़ (प्रतिद्वन्द्वी), उससे बहुत ईर्ष्या करता है।"

"क्यों?"

"क्यों न करे?" इन्स्पेक्टर साहब बोले, "उन दोनों का मुकाबला ही क्या? अक़्ल और शक्ल में, काम-काज में दोनों में कितनी विषमता है! एक कोयल है तो दूसरा कौआ, एक गाय है तो दूसरा गधा।"

"तो गधे से हमारा क्या काम चलेगा?"

"भार ढोने का," शमसुद्दीन हँसकर बोले।

"हाँ, गधे का भी तो महत्त्व होता है," केसरचन्द ने कहा।

"गधों का क्या महत्त्व हो सकता है," चाँद रानी ने व्यंग्य कसा। शमसुद्दीन तो इशारा समझ गए, मगर केसरचन्द की समझ में न आया।

"हमारे काम खूब आएगा वह।"

"आप उसे यहाँ लायेंगे?"

"वह स्वयं आयेगा।"

"कब?"

"कल।"

"और मातादीन?"

"शाम को।"

"उसके पत्र का क्या नाम है?"

"नया संसार।"

"नाम तो खूब है!"

"काम भी तो खूब करता है," शमसुद्दीन बोले, "जब इतवार को उसका अख़बार छपता है तो धूम मच जाती है। उस दिन कोई और मुक़ामी पर्चा तो निकलता नहीं। लोगों के पास पढ़ने का काफ़ी अवकाश होता है। फिर चटपटी और मसालेदार चीज़ें किसे अच्छी नहीं लगतीं!

बड़े-बड़े अधिकारियों पर कितने मजेदार हमले होते हैं ! उनकी प्राइवेट ज़िन्दगी के बारे में कितनी दिलचस्प बातें होती हैं ! अल्लाह क़सम ! कई नावल्स की सामग्री होती है।"

"चटपटे और मसालेदार," केसरचन्द ने कहा।

"लेकिन गवर्नमेण्ट इसके विरुद्ध कार्यवाही नहीं करती ?" बैकुण्ठ ने पूछा।

"इसीसे मातादीन को निराशा होती है।"

"निराशा ! मातादीन को ? वह कैसे ?" बैकुण्ठ हैरान हो उठा।

"आप नहीं जानते इस दुनिया को बैकुण्ठ बाबू !" बूढ़ा इन्स्पेक्टर शमसुद्दीन बोला, "यदि गवर्नमेण्ट मातादीन के हमलों को नोटिस में लाने लगे तो उसके पत्र की कितनी बिक्री बढ़ जाय और साथ ही उसका महत्त्व। वह तो चाहता है कि शासन उस पर मुकद्दमा चलाये, पर शासन उससे अधिक समझदार है।"

"और सम्बन्धित अधिकारी ?"

"उस बेचारे को खामोश रहना पड़ता है।"

"क्यों ?"

"अब क्या करे ? यदि कोर्ट में मुक़द्दमा करे तो वकीलों की चाँदी और मातादीन के पौबारा। वह अदालत की कार्यवाही मोटे-मोटे शब्दों में लिखेगा। अदालत में वकील लोग उस पर तरह-तरह की जिरह करेंगे। हॉकर उसका नाम लेकर और मुक़द्दमे का हवाला देकर, चिल्ला-चिल्लाकर अख़बार बेचेंगे। धड़ाधड़ पेपर बिकेगा। होटलों पर उसीकी चर्चा होगी, घरों में उसीका ज़िक्र होगा, औरतें उसी पर आलोचना करेंगी। वह सारे शहर की निगाहों का केन्द्र बन जायगा।"

"तौबा !" बैकुण्ठ ने कहा।

"बैकुण्ठ जी ! अब आप ही बतलाइए कि इस झगड़े में कौन पड़े ? हर एक आदमी यही चाहेगा कि जहाँ तक हो इस उलझन से बचे।"

"बचे ! बच कैसे सकता है ?"

"यही तो आप नहीं समझते," शमसुद्दीन कहने लगे, "मातादीन बुद्धिहीन नहीं, बहुत अनुभवी ह। इन्सानी खसलत (मानव-प्रकृति) से वह खूब वाक़िफ़ (परिचित) है। वह कभी भी किसी अधिकारी पर एकदम और सीधा हमला नहीं करता। वह पहले संकेत करता है और इनडाइरेक्ट ढंग से उसे सूचित करता है, फिर अपने असिस्टेंट को उस अफ़सर के पास सन्देश देकर भेजता है। समझदार अधिकारी एकदम समझौते की दर्ख़ास्त करता और मूल्य चुकाता है ?"

"मूल्य ? समझौते का मूल्य ?" केसरचन्द ने पूछा।

"हाँ, समझौते का मूल्य।" शमसुद्दीन ने उत्तर दिया, "और यदि वह अकड़ता है तो आगामी अंक में हमला शुरू हो जाता है। तीन-चार हमलों के बाद सम्बन्धित अधिकारी हथियार डाल देता है। लेकिन कभी-कभी कोई ऐसा ढीठ व्यक्ति भी आ जाता है जो हथियार नहीं डालता।"

"कभी तो झुकता ही होगा ?" चाँद ने पूछा।

"ज़रूरी नहीं। ऐसी हालत में लड़ाई लम्बी होती जाती है और लम्बी लड़ाई में यह डर होता है कि लोग दिलचस्पी लेना बन्द कर देते हैं। फिर मातादीन स्वयं ही उस पर लिखना बन्द कर देता है।"

"और हार मान लेता है," चाँद ने कहा।

"यों ही कह लीजिए।"

"और यदि उसने यहाँ भी ऐसा ही किया तो ?"

"इसकी नौबत नहीं आएगी।"

"और यदि शाद ने उसे खरीद लिया ?"

"खरीद तो हम रहे हैं।"

"यदि उसने अधिक मूल्य दे दिया ?"

"हमसे अधिक मूल्य कौन दे सकता है !"

"कैसे ?" बैकुण्ठ ने पूछा।

"आप सचमुच बड़े भोले हैं," शमसुद्दीन सिर हिलाते हुए बोले।

"तो मातादीन यहाँ आ रहे है ?"

"न आने का कारण ?"

"और गौरीशंकर ?"

"अजी वह तो कच्चे धागे में बँधे आयेंगे ।"

"तो दावत का क्या होगा ?" केसरचन्द ने पूछा ।

"दावत होगी और क्या ?" शमसुद्दीन ने उत्तर दिया ।

"सारे प्रोग्राम के साथ ?"

"क्यों नहीं ?" चाँद रानी उत्तेजित होकर बोली, "एक व्यक्ति के न आने से हमारा प्रोग्राम क्यों खराब हो ?"

"और जब एक के बजाय दो आ रहे हों ।"

"और दावत के बाद सारा प्रोग्राम तय हो ।"

"बिलकुल ।"

अपने कमरे में आकर और कपड़े बदलकर बैकुण्ठ बिस्तर में घुस गया।

क्या वह स्वप्नों के संसार में बस रहा था अथवा वास्तविकता की दुनिया में? आज की बातों से उसका सिर घूम रहा था और घूमता भी क्यों न? अपने जीवन में उसने आज तक ऐसे लोग नहीं देखे थे और न ऐसी बातें सुनी थीं। चाँद रानी का चरित्र उसके लिए एक गोरख-धन्धे से कम न था। केवल उसी का क्यों? उसका पति उसके लिए पहेली से कम न था। हाँ, उनके मित्रों को समझना कुछ मुश्किल न था। शमसुद्दीन और परवाज़, दिलेरसिंह और रायसाहब, ये सब स्वार्थी पुरुष थे। लेकिन अजीब बात यह थी कि इन सबमें कोई शत्रुता न थी, कोई वैमनस्य न था। उसे इतने दिनों में कोई बात नज़र न आई जिससे उन में कोई वैर-भाव दिखाई दे। अजीब लोग थे वे। सब अपने-अपने समय पर आते और एक-दूसरे के मार्ग में कोई रुकावट न बनते। वे इकट्ठे भी आते और चाँद रानी उनका स्वागत करती, उनका सत्कार करती। दलाल प्रायः घर पर न रहते। यदि रहते भी तो क्या फ़र्क पड़ता? मतलब यह कि वह मार्ग का रोड़ा न बनता और अगर बनने की भूलकर भी कोशिश करता तो वह उसे रास्ते से अलग कर देती। लेकिन शायद इसकी नौबत ही नहीं आएगी, उसने सोचा। उसे तो अपने बीमे के केसों से सम्बन्ध था, इससे परे कुछ नहीं। पति वाली बात तो उसे उसमें नज़र ही नहीं आई। उसके अन्दर का पति मर चुका था अथवा शायद पैदा ही नहीं हुआ था। न उसने कभी एक पति की तरह अपने अधिकार

मनवाने की कोशिश की थी। उसके अधिकार थे ही नहीं। वह तो इस संसार में कर्तव्य पूरा करने आया था। वह एक तथाकथित पति था। यदि चाँद के बारे में वह किसी दूसरे से यह बात सुनता तो विश्वास न कर सकता। लेकिन अपनी आँखों पर कैसे विश्वास न करे? और फिर आँखें ही क्यों? वह स्वयं एक एक्टर बना हुआ था। इस अद्भुत नाटक में वह स्वयं भी पार्ट कर रहा था—अपनी इच्छा के विरुद्ध, न चाहते हुए भी। काश वह भाग निकलता! लेकिन ऐसा करने में वह अपने-आपको असमर्थ पा रहा था। दरअसल वह भागना चाहता भी न था, इसलिए कि उसे नाटक में साधारण पार्ट भी न मिला था। वह स्वयं भी एक प्रकार से नायक था। वह हँस दिया। खूब है यह नाटक भी, जिसमे एक नहीं, कई नायक हैं और जहाँ उनकी संख्या घटने के बजाय बढ़ती जा रही है। और अब दो और नायक आ रहे थे। पहले हीरो भी तो कमाल के आदमी थे। उसने पढ़ा था कि पूर्वकाल में ऐसी जातियाँ थीं जहाँ औरतों की कमी के कारण एक औरत के चार या पाँच पति होते थे और उनमें कोई लड़ाई न होती थी, कोई झगड़ा न होता था। वे सब मिलकर रहते थे। पाँच भाइयों की एक ही पत्नी होती थी। ऐसे भी कुटुम्ब हैं जहाँ पाँच पत्नियों का एक साझा पति होता है। वाहरे मानव! कितनी विषमता! लेकिन लोग साझी चीजों के विरुद्ध क्यों हैं? जब अर्थशास्त्र में साम्यवाद को इतना महत्त्व दिया जाता है, सामाजिक और विवाह सम्बन्धी बातों में हम ऐसा करने से क्यों घबराते हैं? चाँद तो इस मामले में समाजवाद के सिद्धान्त को कितना प्रोत्साहन दे रही है, भिन्न प्रकृति के लोगों को एक ही केन्द्र पर ला रही है और उनके अन्दर पारस्परिक प्यार के अंकुर बो रही है। परन्तु क्या यह सचमुच प्रेम के प्रभाव से हो रहा है? प्रेम की भावना उसे शाद के विरुद्ध घृणा की भावना रखने के लिए क्यों बाध्य कर रही है? यह तो पुरानी कहानी है। प्रेम और घृणा की भावनाएँ एक-दूसरे के पड़ोस में बसती हैं। कभी एक उभरती है, कभी दूसरी। यह स्थिति पर निर्भर है। वह व्यक्ति,

जिसमें अथाह प्रेम की भावना भरी है, अचानक घृणा भी दिखा सकता है। चाँद के अन्दर द्वेष की भावना कैसे उत्पन्न हुई ? जब प्रेम-भावना की पूर्ति न हो सकी। यदि केवल कृष्ण उसके प्यार के उपहार को स्वीकार कर लेता तो अप्रीति की भावना जागृत ही क्यों होती ? लेकिन वह यह क्यों समझ रही है कि वह जिसे चाहे अपने वश में कर ले ? यह भी तो गलत बात है। लेकिन उसके सामने उसकी गलती जतलाना भी तो एक संकट मोल लेना है। हो सकता है, वह नाराज़ हो जाय और उसकी नाराज़ी का मतलब होगा कि उसे घर छोड़ना पड़ेगा, इस आराम के जीवन को तजना होगा। लेकिन उसके लिए यह भी तो उचित न था कि अपने-आपको एक गलत औरत के हाथ में दे दे, अपने-आपको लहरों के हवाले कर दे, वे जहाँ चाहें उसे ले जायँ, मंझधार में छोड़ दें अथवा किनारे पर लगा दें। किनारा ! किनारे की उम्मीद तो अब बिलकुल असम्भव थी, उसका विचार करना भी फ़िज़ूल था। लहरों की दया पर चलने वाली इस वेग-गति नौका में किनारे की आस रखना एकदम निरर्थक है। परन्तु वह किनारे का विचार ही क्यों करे ? वहाँ रखा ही क्या है ? उसमें आनन्द ही कहाँ है ? तूफ़ानी लहरों से खेलना क्या कम मज़े की बात है ? यही न, कि नौका के भँवर में फँस जाने का डर है, उसके टुकड़े-टुकड़े होने का भय है। तो क्या हुआ ? संक्षिप्त किन्तु भरपूर जीवन ही तो वास्तविक जीवन है। यदि ऐसे आनन्ददायक जीवन के बाद लहरों ने नौका को हड़प भी लिया, तो क्या ? यह संक्षिप्त किन्तु भयावह जीवन कितना पुरलुत्फ़ है। और वह इसे किसी मूल्य पर छोड़ने को तैयार न होगा, उसकी हर क़ीमत चुकाएगा। यही क़ीमत है न कि वह उसकी इच्छाओं के सामने अपना सिर झुका दे, उसके विचारों को अपनाये, उसके इशारे पर नाचे, और उसके आदेशानुसार चले ? वह सब-कुछ करेगा, उसकी हर बात मानेगा, उसके संकेत पर नाचेगा, उसकी आज्ञा का पालन करेगा। इसमें है ही क्या ? लेकिन यदि उसकी आज्ञा गलत प्रकार की हुई ? अब कौन वह ठीक प्रकार के काम कर

रहा था? सिनेमा उसके साथ अकेला जाता था, घंटों उसके साथ एकान्त में बैठकर ताश खेलता और गप लड़ाता था। उसके घर में रहता था। लोग न जाने उसके बारे में क्या-क्या सोचते थे? लेकिन उसने कब लोगों की और उनके सोचने की परवाह की थी? वह कब उनकी बातों से प्रभावित होता था? वह कब उनके मूक संकेतों की ओर ध्यान देता था? उसने उनकी चुनौती को स्वीकार किया और समाज में विद्रोही बनकर रहना स्वीकार किया। गाँव में शायद उनका बहिष्कार कर देते, लेकिन यहाँ कौन ऐसा कर सकता था? फिर वे खुले बंदों समाज से लड़ रहे थे, खम ठोंककर और छाती तानकर उसका मुक़ाबला कर रहे थे। वह अकेला नहीं। वे सब—चाँद और वह, शमसुद्दीन और परवाज़, दिलेरसिंह और राय साहब। वे समाज को चिढ़ा रहे थे, उसके मुँह पर चपत लगा रहे थे और अब वे सब मिलकर एक नये शत्रु का मुक़ाबला करने जा रहे थे—ऐसा शत्रु, जिसने उनके निमन्त्रण को अस्वीकार किया, उनके प्रियतम की बात मानने से इन्कार कर दिया। वह भी इस लड़ाई में शामिल होगा, शाद के विरुद्ध साझी मोर्चे में साथ देगा और उसे परास्त करने में, उसे चारों खाने चित गिराने में, चाँद के कंधे-से-कंधा मिलाकर लड़ेगा। अगर उनकी अपनी हार हो गई तो भी क्या? लहू गर्म करने का यह ढंग बुरा भी नहीं। हाँ, इस मोर्चे पर खर्च खूब होगा। मातादीन गौहर को काफ़ी रुपया अदा करना होगा, परन्तु रुपये की कमी की शिकायत तो नहीं हो सकती। आखिर कौनसी मामूली असामियाँ हैं! दिलेरसिंह सचमुच बहुत दिलेर है। उस दिन यदि शमसुद्दीन ने तीन हज़ार का प्रबन्ध किया था, दिलेरसिंह उससे दुगने का इन्तज़ाम कर सकता है। राय साहब भी इससे कम नहीं, परन्तु खर्च भी कौनसा कम है? एक इस दावत पर पाँच सौ उठ जायगा। और ऐसी दावतें कितनी होती हैं, बाक़ायदा और लगातार। अब उसके ज़िम्मे भी एक काम होगा—शाद के विरुद्ध मातादीन की सहायता करना, उसके पत्र में लेख लिखना, उसे सामग्री जुटाना। चलो मज़ा रहेगा।

"कौन ?" उसने देखा कि उसके कमरे का दरवाज़ा खुला, कोई अन्दर प्रविष्ट हुआ। वह बिस्तर में उठकर बैठ गया। आने वाले ने बिजली का बटन दबाकर बत्ती जलाई।

"मैंने सोचा, आज आप नहीं आएँगी।"

"न आने का कारण ?" चाँद ने अन्दर से कुण्डी लगाते हुए कहा।

"इसलिए कि आज आप अधिक परेशान थीं।"

"परेशानी के कारण आना तो और भी ज़रूरी था।"

वह उसकी चारपाई पर बैठ गई।

"केसरचंद जी ?"

"वह इस समय तक कैसे जाग सकते हैं ? अपने कमरे में खुर्राटे भर रहे हैं।"

"और आपने बाहर से उनका कमरा बन्द कर दिया होगा ?"

"कर तो दिया, किन्तु न भी करती तो क्या था ?"

"बेचारे बहुत सीधे-सादे हैं।"

"आज आप उनसे बहुत सहानुभूति जतला रहे हैं।"

"इसलिए कि कल मुझे भी सहानुभूति की आवश्यकता पड़ेगी।"

"आपको ? क्यों ?"

"मेरी जगह छिन जायगी।"

"क्या बातें कर रहे हो ?"

"ग़लत नहीं कह रहा।"

"ठीक भी नहीं कह रहे।"

"यदि वह हार मानकर रास्ते पर आ गया तो फिर मुझे कौन ?"

"कौन रास्ते पर आ गया ?"

"शाद।"

"वह !" चाँद एकदम आगबबूला हो उठी, "तुमने किसकी चर्चा शुरू कर दी ? मैं इस समय उसे बिलकुल भुला देना चाहती थी, तुम्हारे

और अपने बीच में किसी दूसरे को देखना न चाहती थी।"

"दूसरे के नाम को भी नहीं ?"

"नाम को भी नहीं।"

"ऐसा क्यों ?"

"तुम नहीं जानते बैकुण्ठ," वह उसके हाथ को अपने हाथ में लेकर और उसे अपने गालों पर सहलाते हुए बोली, "तुम मेरे लिए सब-कुछ हो।"

वह चुप रहा।

"अगर तुम यहाँ से चले जाओ तो न जाने मेरा क्या हाल होगा ? क्या मैं जीवित भी रह सकूँगी ? अब तुम मेरे लिए बहुत-कुछ हो।"

वह फिर भी खामोश रहा।

"तुम्हें पहले दिन ही देखकर मैं तुम्हारी पुजारिन बन गई थी और तुम्हें पाये बिना चैन न पा सकी।"

"जैसे आजकल शाद······।"

"तुमने फिर उसका नाम ले दिया। मैं जानती हूँ, क्यों ? तुम्हारे अन्दर ईर्ष्या की ज्वाला धधक रही है। यह स्वाभाविक है। परन्तु तुम ग़लती पर हो।"

"ग़लती पर ? वह कैसे ?"

"इसलिए कि तुम नहीं समझते। केवल शाद ही की बात क्यों करते हो ? इस प्रकार तो दूसरे लोग भी हैं।"

वह मूक रहा।

"और उनके लिए भी तुम्हारे मन में ईर्ष्या होनी चाहिए।"

"लेकिन······।"

"इसलिए कि तुम उन्हें जान गए हो, उन्हें काफ़ी पहचान गए हो, पर असलियत को अब भी नहीं जान सके।"

"असलियत ? असलियत कुछ और है ?"

"बिलकुल।" वह उसके हाथ को सहलाती हुई बोली, "मैं एक

स्वांग भरी रही हूँ, एक नाटक खेल रही हूँ।"

"नाटक ?"

"हाँ प्यारे, नाटक।"

"लेकिन क्यों ?"

"केवल आनन्द लेने के लिए, बदला लेने के लिए।"

"बदला ? किससे ?"

"समाज से।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि समाज ने मुझे ठुकराया, मैं उससे बदला ले रही हूँ— दारिद्र्य के विरुद्ध, भूख कें विरुद्ध। विवशता के विरुद्ध। तुम जानना चाहोगे मेरी कहानी ? लो सुनो, मैं अजीब हालात में पैदा हुई। मेरी माँ को उसके पति ने विवाह के फौरन पश्चात् त्याग दिया। वह किसी और की हो गई। परन्तु एक वर्ष पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई। माँ ने एक नई शादी कर ली। दरअसल बाक़ायदा शादी भी नहीं हुई और उससे मैं पैदा हुई। समाज ने मुझे घृणित दृष्टि से देखा और मेरे पिता की मृत्यु के बाद मुझे घर से निकाल दिया। दरअसल माँ का केवल यह दोष था कि वह गरीब थी, नहीं तो कितने ऐसे 'शरीफ़' घराने हैं जो 'बदमाशी' के पूरे अड्डे हैं, कितने 'शरीफ़' लोग हैं जिन्हें 'बदमाशी' के बिना कोई दूसरा काम ही नहीं। और उनके दोष केवल इसलिए क्षमा कर दिए जाते हैं कि उनके पास पैसा है और समाज जितना एक दरिद्र को दबाता है, उतना ही एक धनी से दबता है।"

"तो जब आप दोनों को घर से निकाल दिया, फिर ?"

"हम उस बुरी हालत में घर से निकल पड़ीं। हमारी आँखें रो रही थीं, हमारा दिल रो रहा था। कोई आसरा न था, कोई सहारा न था।"

"मुहल्ले की किसी औरत ने आपकी सहायता न की ?"

"औरत ने ? तुम नहीं जानते बैकुण्ठ, स्त्री का दिल पुरुष के दिल

से कहीं अधिक सख्त होता है, सदाचार का पर्दा ओढ़े वह अपनी एक अभागी बहन पर घोर अत्याचार ढा सकती है। ईर्ष्या की चिनगारी उसके अन्दर हर समय छिपी रहती है। परन्तु वह तिनकों से ढकी हुई होती है, मामूली हवा का झोंका उसे भड़का देता है और ज्वाला प्रचण्ड हो उठती है।"

"परन्तु नारी-हृदय तो नाज़ुक माना गया है," बैकुण्ठ ने कहा।

"नाज़ुक शरीर होने के कारण। परन्तु यह ज़रूरी नहीं कि उसके अन्दर दिल भी नाज़ुक हो।"

"फिर आपने क्या किया?"

"क्या करतीं? कहाँ जातीं? कोई सम्बन्धी हमें सहारा देने के लिए न था, कोई जान-पहचान वाला हमें घर रखने की सोच तक न सकता था।"

"परन्तु क्यों?"

"इसलिए कि उन्हें हमारा चाल-चलन पसन्द न था। हमारे समाज में लोग धर्म का ढकोसला भरते हैं, मन्दिरों में जाते हैं, तीर्थयात्रा करते हैं, पवित्र नदियों में नहाते हैं, बड़े-बड़े विद्वान् आध्यात्मिक समता की व्याख्या करते हैं, इन्सान को एक मानते हैं, इन्सानियत का दम भरते हैं; लेकिन उनके कथन और काम में कितना अन्तर होता है! मन्दिर में घण्टों पूजा करने वाला पुजारी घर आकर हरदम अपनी पत्नी से लड़ता है और उसे पीटता है। पत्थर के बुत के सामने झुकने वाला व्यक्ति भगवान् के बनाये हुए मानव को छूने से झिझकता है और उसका दोष केवल यह है कि वह उससे नीचे के वर्ग में उत्पन्न हुआ था। एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्म के विरुद्ध घृणा की भावना फैलाते हैं और लड़ाई के जज़्बे को भड़काते हैं और परिणामस्वरूप मनुष्य एक-दूसरे के विरुद्ध खून की होली खेलते और मानव-रक्त को कितना सस्ता बना देते हैं। मनुष्य भेड़िया बन जाता है और भेड़िये से कहीं अधिक मानव का ध्वंस करता है।

"आप तो मानव-प्रकृति से खूब परिचित हैं !"

"क्या मैं ग़लत कह रही हूँ ?"

"यह मैंने कब कहा ? मैं तो आपकी विद्वत्ता की सराहना कर रहा था। मैं यह अनुभव कर रहा था कि जहाँ आपने पढ़ा भी है वहाँ आपने मानव को पास से देखा भी है।"

"शायद आप ठीक कह रहे है। मैं और कुछ नहीं तो पत्र-पत्रिकाओं को तो पढ़ती ही रहती हूँ और मानव-प्रकृति को मुझे कई स्त्रियों से अधिक परखने का अवसर मिला है।"

"हाँ, तो फिर क्या हुआ ?"

"फिर माँ शहर में आ गई और वही करने लगी जो समाज के हाथों सताई हुई दूसरी स्त्रियाँ करती हैं।"

"ओह !"

"आपको यह जानकर बहुत धक्का लगा होगा। बहुत लोगों को लगता है। ऐसा क़दम उठाने से पहले स्त्री को किस विवशता का सामना करना होता है, इसका अनुमान वे नहीं लगा सकते।"

वह खामोश रहा।

"और इस प्रकार इन हालात में मैं पली। लेकिन माँ ने मेरी कड़ी निगरानी रखी। मै बहुत सुन्दर तो न थी, परन्तु उभरते हुए यौवन का समुद्र मेरे अन्दर ठाठें मार रहा था। मैं यह देखकर हैरान थी कि मेरे लिए कुछ बड़े-बड़े अफ़सरों ने ऑफ़र दी और अन्त में माँ ने मुझे एक अफ़सर के हवाले कर दिया।"

"अफ़सर के ? कौन था वह ?"

"अब उसके बारे में विस्तार से फिर कभी बताऊँगी। वह माक़ूल वेतन पाता था—यही कोई पन्द्रह-सौलह सौ मासिक। लेकिन मुझे वहाँ आज़ादी न थी। वह मुझे अपनी दासी बनाकर रखना चाहता था। सख्त पर्दे का पक्षपाती था। वह इस बात का विरोधी था कि मैं दूसरों के साथ बातचीत करूँ और उनसे मिलूँ। उसके घर मेरा दम घुटने

लगा। इस फिज़ा से मैं घबराने लगी। मैंने कई बार सोचा कि भाग निकलूँ। आखिरकार मैंने माँ से स्पष्टतया कह दिया कि मैं उसके घर नहीं रह सकती। माँ ने बहुत समझाया, उस व्यक्ति ने भी अब क्षमा-याचना की, भविष्य में सख्ती न बरतने की प्रतिज्ञा की, माँ को पैसों का लालच दिया।"

"आपसे बहुत प्यार करता होगा?"

"प्यार! प्यार शायद करता होगा। काला-कलूटा, गंजा, मोटा, यदि ऐसे व्यक्ति के प्यार का कुछ मतलब हो सकता है। उसके पसीने से हर समय एक विशेष प्रकार की गन्ध आती थी। उसके कपड़ों में वह पसीना घर किये रहता। उसकी अनुपस्थिति में मुझे उसका घर बुरा न लगता था। मैं बड़े मज़े से रहती। परन्तु दिल में सदा एक खटका-सा लगा रहता कि वह आता ही होगा। आकर अपना प्रेम प्रकट करेगा और उसके प्रेम से भी पसीने की गन्ध आएगी। मुझे यह डर रहता कि कहीं यह गन्ध मेरे अन्दर न बस जाय, मेरी नाक में स्थायी रूप से न अटक जाय। उफ़! वह गन्ध! आज भी जब मुझे उसकी याद आती है, मैं काँप उठती हूँ।"

"परन्तु आपने उसके प्यार को कभी कोई महत्त्व नहीं दिया?"

"कभी नहीं।"

"बुरी बात न थी?"

"होगी। लेकिन अपने दिलको किसी की दासता के लिए विवश करना बुरी बात न थी? मैंने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु उसने आरम्भ ही से विद्रोह की पताका गाड़ रखी।"

"किसने?"

"दिल ने।"

"ओह!"

"और अन्त में मैंने उसके सामने शस्त्र डाल दिए और उसके घर जाने से इन्कार कर दिया।"

"आपकी माँ ने क्या कहा ?"

"मुझे समझाया, धमकाया-डराया कि मैं उसके पास जाऊँ।"

"ऐसा क्यों किया ?"

"पैसा। वह माँ को प्रतिमास काफ़ी रुपया भेजता था, जिससे उसका गुज़ारा चलता। दूसरे, अब कोई और घर पर आता भी न था। परन्तु माँ को इसका बहुत दुःख हुआ। वह जीवन में बहुत दुःख झेल चुकी थी। अब गरीबी को सहन न कर सकती थी। वह बीमार पड़ गई और जीवित न रह सकी।"

"आपको बहुत दुःख हुआ होगा ?"

"इससे बढ़कर मेरे लिए दुःख की दूसरी बात क्या हो सकती थी ? मेरे लिए दुनिया अंधेरी हो गई। मैंने सोचा, पराजय स्वीकार कर लूँ और फिर से वह जीवन आरम्भ कर दूँ। परन्तु दिल ने एक न मानी और मैंने उसके पास जाने से साफ-साफ इन्कार कर दिया।"

"फिर ?"

"फिर मेरी भेंट शमसुद्दीन से हो गई। यद्यपि वह पचास वर्ष से ऊपर थे, मगर उनका बात करने का ढंग, शायरों का-सा लहजा, लखनवी अन्दाज़, मुझे ये सब अच्छे लगे। अब मैं उनके साथ उनके घर जाने लगी। यह स्वाभाविक था कि उनकी पत्नी को बुरा लगे। उनके दो जवान लड़के और एक लड़की भी थी। घर में उन पर बहुत हमले होने लगे। तब एक दिन उन्होंने मुझसे कहा कि मैं दुनिया को दिखाने के लिए नाममात्र शादी कर लूँ और उनकी बात को मानते हुए मैंने दलाल साहब से शादी कर ली, मतलब शादी का ढोंग रचाया। यथाविधि हमारा विवाह नहीं हुआ, लेकिन दूसरों से यही कहा।"

"और दिलेरसिंह और राय साहब ?"

"उनसे बाद में मित्रता हुई। दलाल साहब इंशोरेंस का काम करते थे। उनकी माक़ूल आमदनी थी, परन्तु मेरे खर्च के लिए वह कम थी। शमसुद्दीन ने दो मोटी असामियाँ ढूँढ़ीं, दिलेरसिंह और राय

साहब। उन दोनों ने एक-एक लाख की पॉलिसी ली और उनके बदले में हमने अपनी मित्रता दी।"

"और परवाज़ ?"

"परवाज़ तो शायर है। बस एक बार मुशायरे में उससे भेंट हो गई। लेकिन वह तो उन लोगों में से है जिनका नाम नौकरी हासिल करने के लिए वेटिंग लिस्ट में रखा जाता है।"

"शाद ?"

"तुमने फिर उसका नाम ले दिया।" वह क्रुद्ध होकर बोली, "मैं जानती हूँ, तुम्हारे अन्दर ईर्ष्या की चिनगारी सुलग रही है। यद्यपि मैंने तुम्हें यह विश्वास दिलाया है कि जो स्थान तुमने मेरे दिल में बना लिया है, वह दूसरे के भाग में नहीं आ सकता, तुम फिर भी हसद की आग में जल रहे हो।"

"और आप ?"

"मैं हसद नहीं, गुस्से की आग में जल रही हूँ। ज़िन्दगी में मैंने हार का मुँह नहीं देखा है, घोर कष्ट और आकुलता की दशा में भी मैंने पराजय से समझौता नहीं किया है, किसी के सामने सिर नहीं झुकाया है, केवल दूसरों को अपने दरवाज़े पर माथा रगड़ते देखा है। मैं यह कभी सोच नहीं सकती थी कि कोई व्यक्ति मेरी बात को मानने से इन्कार कर सकता है। उस व्यक्ति को मैंने एक पुलिस-अधिकारी के रूप में नहीं, एक कवि के नाते निमन्त्रण दिया था और उसने एक पुलिस-अधिकारी के घमण्ड से उसे ठुकरा दिया। अब ठोकर मारने की मेरी बारी है।"

"परन्तु वह एक अफ़सर है और वह भी पुलिस का ?"

"क्या हुआ ? उसे एक स्त्री की हठधर्मी का मुक़ाबला करना होगा। परन्तु अब उसकी तफ़सील के बारे में मत पूछना।"

"क्यों ?"

"सिर में दर्द हो रहा है।"

"दबाऊँ ?"

"दर्द ?"

"सिर।"

"जैसी मर्ज़ी।"

इतवार का प्रोग्राम स्थगित नहीं हुआ, बल्कि बड़े शानदार ढंग से मनाया गया। तीस आदमी डिनर पर आमन्त्रित थे। डिनर दिलेरसिंह की ओर से दिया गया था। इससे पूर्व एक छोटी ड्रिंक पार्टी थी; जिसमें इन तीनों के अतिरिक्त वे चारों पुराने और दो नये मित्र थे—मातादीन गौहर और गौरीशंकर। स्काच ह्विस्की की एक पूरी बोतल थी। बैकुण्ठ के लिए यह एकदम पहली अनुभूति थी कि इतने आदमियों के मध्य बैठकर पिये। दरअसल चाँद रानी ने उसे बतलाया था कि सोसाइटी में बैठने के लिए कभी-कभी पीना बहुत ज़रूरी है। यह बात सुनकर वह बहुत घबराया और क्षमा-याचना करने लगा। इस पर चाँद को एक संक्षिप्त भाषण देना पड़ा—इस तरह एक-दो पेग लेने को पीने में नहीं गिनते। यह तो एक रिवाज है जिसे सभ्य समाज में आवश्यक माना जाता है। फिर एक या दो पेग पीने से कोई असर भी तो नहीं होता, बल्कि एक मादकता प्राप्त होती है। इस मादकता के बिना काव्य-रचना कौनसा आसान काम है! वास्तव में सफल कवि का राज़ यही है कि वह सृजन के समय अस्थायी मादकता प्राप्त करे। तभी तो विचारों को उड़ान मिलती है और काव्यधारा को प्रवाह मिलता है। और उसने कहा था—कौन विख्यात और सफल कवि ऐसा नही करता? और जो नहीं पीता, वह कवि बन ही कैसे सकता है? यहाँ की तो बात छोड़िए। इस दरिद्र देश में कवि को दो जून खाने को नहीं मिलता, पीने के लिए पैसे कहाँ से लाएगा? लेकिन अन्य देशों में तो यह साधारण-सी बात है। पहले कुछ दिन तो वह उसकी बातों को हँसी में टालता रहा, लेकिन एक दिन शाम को जब वह चाँद के कमरे में पहुँचा तो उसकी मेज़ पर दो बोतल बीयर और दो गिलास पड़े थे। वह घबरा गया। लेकिन उसने

उसे तसल्ली दी कि बीयर तो जौ का पानी है और गर्मियों में बहुत लाभदायक और ठण्डक पहुँचाने वाला होता है। इसे शराब कहता ही कौन है? उसने यह बात इतने बलपूर्वक कही कि वह अस्वीकार न कर सका और पी गया। उसका मज़ा इतना अच्छा न था, लेकिन पीने के बाद वह कुछ सरूर अवश्य महसूस कर रहा था। वह हँस रही थी—कभी बीयर का भी कुछ असर होता है? कुछ दिनों के बाद उसने ह्विस्की का छोटा पेग पिलाया। एक घण्टा बातचीत के दौरान में उसने उसे समाप्त किया। उसे पीने के बाद वह सरूर (मस्ती) अनुभव कर रहा था। एक-दो बार फिर पीने के बाद अब वह उसे बुरी नहीं लगती थी। ड्रिंक का प्रबन्ध राय साहब ने किया था। उसके बाद डिनर हुआ। बैकुण्ठ की उपस्थिति में ऐसी शानदार पार्टी कभी नहीं हुई थी। चार प्रकार का माँस था, मछली थी। सब्ज़ियों इत्यादि की तो बात ही क्या? लेकिन सब चीज़ें बहुत स्वादिष्ट बनी थीं और यदि अतिथि बार-बार खाने की प्रशंसा कर रहे थे, तो वह बनावटी नहीं थी। नगर के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्ति आमन्त्रित थे—प्रमुख अधिकारी, कुछ वकील, डॉक्टर और सेठ लोग। काफ़ी प्रतिनिधि पार्टी थी। उसके बाद मुशायरा हुआ और गाना-बजाना। चार घण्टे तक महफ़िल गर्म रही। उसके बाद चाय-कॉफ़ी का इन्तज़ाम था और पान-सुपारी का। गोष्ठी काफ़ी सफल रही।

परन्तु इस गोष्ठी में भी चाँद प्रसन्न नज़र नहीं आ रही थी। ऐसा महसूस होता था कि उसके दिल में एक तूफ़ान उठ रहा है। सब लोगों में इस बात को एक ही व्यक्ति समझ सकता था और वह था बैकुण्ठ। वह उसके दिल की कैफ़ियत को समझता था। शाद इस महफ़िल में नहीं आया, उसे इस बात का गुस्सा था। शानदार डिनर और इतने सफल कार्यक्रम को देखकर वह अवश्य प्रभावित हो जाता और शायद उसके प्रशंसकों की सूची में सम्मिलित हो जाता। किन्तु इसके विपरीत उसने उसे अपमानित कर दिया। वह इस अपमान का प्रतिकार

लेने के लिए उतावली हो रही थी। दिल की यह कैफ़ियत उसके मुख पर झलक रही थी। शमसुद्दीन भी इस बात को महसूस कर रहे थे। उन दोनों के अतिरिक्त शेष लोग यह समझ रहे थे कि वे बहुत गम्भीर और अल्पभाषिणी है। प्रोग्राम के अन्त में शमसुद्दीन ने पूछा, "इन लोगों को कौनसा समय दूँ?"

"प्रातः नौ बजे।"

और अगले दिन नौ बजे मातादीन गौहर और गौरीशंकर गौर वहाँ आ उपस्थित हुए। शमसुद्दीन और बैकुण्ठ पहले ही मौजूद थे। केसरचन्द बीमे के काम से बाहर गये हुए थे। चाँद रानी बोली, "इंस्पेक्टर साहब! आपने सारी बात बतला दी होगी?"

"हमें सारे मामले का पता चल गया है," मातादीन बोले।

"तो आपका क्या विचार है?" चाँद रानी ने पूछा।

"आप बिलकुल चिन्ता न करें, हम सब सँभाल लेंगे।"

"इन्होंने यह काम पहली बार तो नहीं किया," गौरीशंकर बोले।

"इससे पहले भी शाद साहब से निपटने का अवसर मिला है?" चाँद ने पूछा।

"शाद नहीं, और बहुतों से निपटने का अवसर तो मिला है," गौहर बोले, "अपना तो जीवन ही इन बातों में बीता है।"

"जीवन? आपकी आयु तो अधिक नहीं।"

"लेकिन सेवक को गत दस वर्ष से इन बातों का काफी अनुभव है," गौर बोले।

"दरअसल मैं और गौर साहब गत दस वर्ष से कन्धे-से-कन्धा मिलाकर चल रहे हैं," गौहर ने कहा।

"मगर आप पत्र के सम्पादक हैं और गौर जी सरकारी नौकर। कन्धे-से-कन्धा मिलाकर कैसे चल रहे हैं?"

"सरकारी नौकर होते हुए भी आप पत्र के सम्पादन-कार्य में मेरा हाथ बटाते हैं।"

"सम्पादन-कार्य में ?" वह हैरान हो गई।

"इसमें हरानी की क्या बात है चाँद जी ?" इन्स्पेक्टर साहब फर्माने लगे, "अब कोई अँग्रेज़ी ज़माना थोड़ा है जो क़दम-क़दम पर पाबन्दी होगी। आज़ादी के दौर में काम करने की पूरी आज़ादी क्यों न हो ?"

"परन्तु मेरे विचार में सरकारी नौकर अख़बार में सम्पादन-कार्य नहीं कर सकते।"

"न कर सकने की बात तो पृथक् है, यहाँ तो करते हैं।"

"कोई मना नहीं करता ?"

"किसकी शामत आई है जो मना करे।" इंस्पेक्टर साहब बोले, "या अगर किसीकी इतनी हिम्मत हो तो अख़बार निकालने का फ़ायदा ?"

"इसका मतलब है और सरकारी नौकर भी दूसरे पत्रों में सम्पादन-कार्य करते होंगे," चाँद ने पूछा।

"बिलकुल," गौहर ने उत्तर दिया, "हमारे नगर से चार दैनिक और दो साप्ताहिक निकलते हैं। इन सबमें भी सरकारी अफसर सम्पादन-कार्य निभाते हैं।"

"लेकिन गवर्नमेंट को पता नहीं होगा।"

"यह कैसे हो सकता है ? ऐसी बात छिपी कैसे रह सकती है ?"

"और फिर कुछ एक्शन नहीं लिया जाता ?"

"इसलिए कि उलटा उनके अपने विरुद्ध एक्शन लिये जाने का डर रहता है।"

"पत्र में ?"

"और नहीं तो क्या ?"

"यह बात है !" चाँद बोली, "इसका मतलब यह हुआ कि आज

के लोकतंत्र पर अखबारों का पूरा कण्ट्रोल है।"

"हाँ," शमसुद्दीन ने कहा, "इससे उलटी बात भी ठीक है कि आज के लोकतंत्र का अखबारों पर भी पूरा कण्ट्रोल है।"

"वह कैसे ?"

"अब अखबार चलाने के लिए पैसा चाहिए। अखबार में से पैसा आना चाहिए, नहीं तो फ़ायदा ही क्या ? मिल जाने पर नुक्ताचीनी अपने-आप बन्द हो जाती है।"

"तब तो पत्रकार खूब पैसा वसूल करते होंगे ?"

"नहीं तो अखबार निकालने का फायदा ही क्या ?"

"लेकिन पत्रों और पत्रकारों के विषय में ऐसा नहीं कहा जा सकता।"

"हाँ, आप बड़े पत्रों को तो इसमें सम्मिलित नहीं कर सकते। लेकिन हमारी तरह के दो पृष्ठों के पत्र तो केवल इसी बल-बूते पर चलते हैं।"

"और इसी सबब उन्हें हर किसी पर हमला करने की आज़ादी रहती है।"

"क्यों ?" चाँद ने पूछा।

"पैसा बटोरने के लिए, और क्यों ?"

"तो जिसके विरुद्ध लिखा जाय, वह अवश्य पैसा देकर आलोचना को बन्द करा सकता है ?"

"निश्चित।"

"यदि शाद ने भी यही किया तो ?"

"कोई अन्तर नहीं पड़ेगा।" गौहर ने उत्तर दिया।

"कैसे ?"

"उससे पैसे वसूल करके भी उसके विरुद्ध लिखते रहेंगे।"

"यह तो खूब रहेगी," चाँद प्रसन्न होकर बोली।

"लेकिन वह पैसे नहीं देगा," गौर ने कहा।

"उसका बाप भी देगा," गौहर जोश से बोला।

"बाप के पैसे देने से उस पर कोई असर नहीं पड़ेगा।"

"आप कैसी बातें कर रहे हैं ?" गौहर हैरानी से बोला।

"इसलिए कि मैं उसे खूब अच्छी तरह जानता हूँ।"

"क्या जानते हैं ?"

"कि वह पैसा लेता है न देता है। पत्रों की अलोचना की कुछ परवा नहीं करता। निडर है और हठ का पक्का।"

"अथवा करेक्टर का मज़बूत है," बैकुण्ठ ने कहा।

"क्या मज़बूत है ?" चाँद क्रुद्ध होकर कहने लगी, "आजकल बहुत से लोग बनते हैं। करेक्टर का मज़बूत है !"

"अजी साहब, ये सब कहने की बातें हैं," शमसुद्दीन बोले, "दुनिया में ऐसे पाखण्डी लोग बहुत हैं, दूसरों को धोखा देने वाले।"

"तो यह हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि देश-हित के लिए हम ऐसे लोगों के पाखण्ड का भाँडा फोड़ें और उनके असली रूप में ज़ाहिर करें ?" चाँद ने कहा।

"असली रूप में तो वह ज़ाहिर है," बैकुण्ठ के मुँह से निकल गया।

"आज तुम्हें क्या हो गया है, बैकुण्ठ ?" चाँद उसे लताड़कर बोली, "उसका असली रूप हमें आपसे ज़्यादा मालूम है। अब रामकली भी तो अपने सतीत्व का ढिंढोरा पीटती है।"

"कौन रामकली ?" गौर ने पूछा।

"एक चरित्रहीन औरत," चाँद दाँत पीसती हुई बोली, "हमारे मुहल्ले ही में रहती है। औरत क्या है, पूरी भैंस है। उसका काम शरीफों को फाँसना और उन्हें लूटना है।"

"अच्छा ! अब समझा," गौर बोला, "उसका नाम रामकली है !" वह कुछ सोचने लगा।

"क्या बात है ?" चाँद ने पूछा।

"कुछ नहीं। मेरे कुछ मित्र उसके पास आते हैं।"

"और वह उनके पास जाती है।"

"आप ठीक फरमा रही हैं," गौर बोला, "अब वह हमारे काम आ सकती है।"

"क्या मतलब ?" चाँद ने सन्दिग्ध दृष्टि से देखते हुए पूछा।

"आप गलत समझीं, मिसेज़ केसरचन्द !" गौहर उन्हें आश्वासन दिलाते हुए बोले, "गौर साहब यह कहना चाहते हैं कि हम उन्हें अपने मतलब के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं।"

"ओह !" वह इतमीनान की साँस खींचती हुई बोली।

"कैसे इस्तेमाल कर सकते है ?" बैकुण्ठ ने पूछा।

"दोनों का सम्बन्ध दिखलाकर।"

"खूब !" चाँद हवा में उछलती हुई बोली, "परन्तु यह काम बड़ी सावधानी से करना होगा। वह बड़ी काइयाँ औरत है। कहीं लेने-के-देने न पड़ जायँ।"

"आपको ?" गौर ने पूछा।

"आपको।" चाँद ने उत्तर दिया।

"इसकी चिंता न कीजिए।"

"तो हमला कैसे शुरू होगा ?"

"बस कल का पत्र आप देखेंगी तो पता चल जायगा।"

"अब आप इनका काम इन पर छोड़िए और............"

"बस आप खामोश रहिए, इन्स्पेक्टर साहब !" चाँद बोली, "मैं आपका मतलब समझ रही हूँ।"

"इसी बात पर तो हम मरते हैं, साहब ! हमारे दिल की बात को और समझता ही कौन है ?"

सब हँस दिए।

"जॉर्ज ! नाश्ता तैयार है ?" चाँद ने आवाज़ दी।

"जी हुज़ूर !" अन्दर से आवाज़ आई।

"आइए," चाँद ने उनसे कहा।

नाश्ता करते हुए गौरीशंकर कहने लगा, "आपका खानसामा बड़ा होशियार है।"

"साहब ! वह खानसामा क्या है, घर का ही आदमी है।" इन्स्पेक्टर साहब ने फर्माया।

"घर का ही ?"

"और नहीं तो क्या ? आज तक उसने न कभी तनखाह तलब की है और न यहाँ से जाने की बात की है।"

"तनखाह के बगैर कैसे गुज़ारा करता है ?"

"उसे अच्छा खाना और अच्छा कपड़ा मिलता है। वह अपना घर समझकर रहता है। मालकिन उससे बेहद खुश है और वह उनसे। अगर उसे कभी छेड़ना हो तो यहाँ से अलहदा करने की बात कर दीजिए। फिर उसकी हालत देखिए। अभी आपको तमाशा दिखाता हूँ।"

"जॉर्ज !" जब वह चाय की ट्रे रखकर जाने लगा तो शमसुद्दीन ने उसे सम्बोधित करते हुए कहा।

"जी !" वह रुक गया।

"मेम साहब का हुक्म है कि तुम एक माह के लिए हमारे घर काम करो।"

वह सफेद बुशशर्ट और सफेद पेंट पहने था। उसकी आयु पचास से कम न होगी, लेकिन उसका क़द साढ़े पाँच फुट से अधिक और शरीर भरा हुआ था। चेहरे का रंग मालकिन के रंग से भी अधिक गहरा था। हाँ उसके मुख पर एक आकर्षण था, जो एक नारी को पुरुष की ओर आकर्षित करता है। इन्स्पेक्टर साहब की बात सुनकर जॉर्ज घबरा गया। उसके चेहरे की रंगत के कारण उसके मनोभाव का तो कुछ पता न चलता था, लेकिन उसकी आवाज़ जैसे काँप रही थी। बोला, "लेकिन साहब, मेरी तबियत तो आज सुबह से खराब है, काम कैसे

कर पाऊँगा ?"

"अच्छा-अच्छा, मत जाना," चाँद रानी उसे तसल्ली देती हुई बोली, "जाओ, जल्द आमलेट लाओ।"

"अभी लाया, मेम साहब !" वह प्रसन्न मुद्रा से बोला।

"देखा, यह हैं मिस्टर जार्ज।" इन्स्पेक्टर साहब उसके जाने के बाद बोले।

"अच्छा, तो हमें आज्ञा दीजिए।" गौहर साहब ने नाश्ते से निवृत्त होकर कहा।

"फिर कब भेंट होगी ?" चाँद ने पूछा।

"जब आदेश हो।"

"आप कल शाम को यहीं खाना खाइए।"

"और मैं ?" गौरीशंकर ने पूछा।

"हम सब कल पिक्चर चल रहे हैं," शमसुद्दीन ने उसकी ओर से उत्तर दिया।

"हम सब कौन ?" बैकुण्ठ ने पूछा।

"इन दोनों को छोड़कर शेष सब।"

"और हम दोनों को क्यों छोड़ा जा रहा है ?"

"क्योंकि आप दोनों हम सबको छोड़ रहे हैं।"

सब ठहाका मारकर हँस दिए।

वे सब विदा हुए। शमसुद्दीन को ऑफ़िस जाना था, बैकुण्ठ को स्कूल।

इन सबके चले जाने के बाद जॉर्ज कमरे में दाखिल हुआ। चाँद रानी सोफे पर लेटी हुई थी। वह नीचे कालीन पर बैठ गया और उसका माथा दबाने लगा। वह बोली, "जॉर्ज, तुमने यह बड़ी खराब आदत डाल रखी है।"

"क्यों मेम साहब ? खराब क्यों ?"

"यदि तुम सचमुच यहाँ से चले गए तो फिर इसे कौन दबाएगा ?"

"मैं कहाँ चला जाऊँगा, मेम साहब ?"

"फ़र्ज किया, तुम नौकरी छोड़ दो।"

"इस ज़िन्दगी में तो यह सम्भव नहीं।"

"अगर हम तुम्हें निकाल दें ?"

"यह असम्भव है ?"

"क्यों ?"

"आप निकाल नहीं सकतीं और साहब बेचारे तो क्या निकालेंगे ?"

"मैं क्यों नहीं निकाल सकती ?"

"क्योंकि मैं निकलूँगा नहीं।"

"तुम कितने वफ़ादार हो जॉर्ज," वह उसके बालों पर अपना हाथ फेरती हुई बोली, "तुम्हारे बिना न जाने मेरा क्या हाल हो ?"

"यहाँ से जाकर मैं ज़िन्दा ही कितने दिन रह सकता हूँ ? और वफ़ादारी का इनाम भी तो कितना मीठा मिलता है, मेम साहब !"

"लेकिन जॉर्ज, यहाँ के भेद बाहर तो नहीं जाते ?"

"मेम साहब ! आप इसकी चिन्ता न कीजिए। मैं किसीसे यहाँ के सम्बन्ध में बात करता ही नहीं। और ये सब लोग हैं भी तो कितने अच्छे ! वे क्यों बात करेंगे ?"

"तुम ठीक कहते हो, जॉर्ज ! और अगर इन सबका सत्कार करने के लिए तुम यहाँ न हो तो मेरा क्या हाल हो ?"

"मेम साहब ! अगर आप इनकी ख़ातिर न करें तो ये लोग आयें ही क्यों ? और इनके आने से रौनक भी तो रहती है।"

"राशन तो ख़त्म नहीं हुआ ?"

"कल मैंने राय साहब से कह दिया।"

"क्या बोले ?"

"दो मास का राशन आज पहुँच जायगा।"

"घी ?"

"घी तो अब गौरीशंकर स्वयं ही भिजवा दिया करेंगे।"

"यह भी ठीक है। पुलिस वालों को तो खालिस घी मिलता है।"

"और बदले में इन्हें भी तो खालिस दोस्ती मिलती है, मेम साहब!"

"जॉर्ज! तुम कभी-कभी बहुत शरीर बन जाते हो।"

"मेम साहब! माफ़ करना ग़लती से हाथ.............."

"यह बात नहीं, जॉर्ज! तुम भी कैसी बात कर रहे हो? मैं तो घी के बारे में कह रही थी।"

"साहब के आने का समय हो गया है।"

"तुम निश्चिन्त रहो। वह अभी नहीं आयेंगे।"

"लेकिन बाहर सड़क पर अपनी कार का हार्न बजा है।"

"वह क्यों साढ़े दस बजे से पहले आ रहे हैं?"

"काम न बना होगा।"

"उनका काम कभी नहीं बनेगा, निकम्मे कहीं के! अच्छा, तुम जाओ, अपने कमरे में जॉर्ज!"

"जी मेम साहब," वह उठते हुए बोला।

और जब केसरचन्द कमरे में प्रविष्ट हुआ, वह सोफे पर मुँह बनाये लेटी हुई थी।

"क्या बात है डार्लिंग?"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

"क्या दुश्मनों की तबियत नासाज़ है?"

"आपको इससे मतलब?"

"लेकिन.............."

"लेकिन क्या?" वह चिल्लाकर बोली, "आप अच्छी तरह जानते हैं कि मुझे सिर का रोग है और उसका एक ही इलाज है कि मुझे डिस्टर्ब न किया जाय, अकेले रहने दिया जाय। लेकिन इस घर में मुझे चैन कहाँ? कभी आपके मित्र हैं और कभी आप इस तरह आ जाते हैं।"

"डार्लिंग......"

"क्या डार्लिंग-डार्लिंग लगा रखी है आपने ?" वह क्रोधावेश से बोली, "इस शब्द का क्यों गलत इस्तेमाल कर रहे हो ? यह केवल दूसरों को दिखाने के लिए है, न कि प्राइवेट इस्तेमाल के लिए। समझे ?"

"समझा।"

"और न जाने तुम यह सब क्यों भूल जाते हो ? इससे पहले भी तुम्हें समझाया था।"

"अब मैं ध्यान रखूंगा।"

"और दूसरे, इस तरह मेरे कमरे में न आया करो। अगर कमरा बन्द हो तो वहीं से लौट जाओ। नौकर से भी पूछने की ज़रूरत नहीं। मैं नहीं चाहती, मेरे आराम में कोई बाधक हो।"

"बेहतर। लेकिन यदि तबियत खराब हुई तो दवाई......"

"दवाई तुम क्या लाओगे ? तुम हर तरह से निकम्मे हो। अगर तुम दवाई के योग्य होते तो मेरी इस तरह तबियत क्यों खराब होती ? मैं सोचती हूँ कि तुम्हारे साथ रहना स्वीकार करके मैंने जीवन की भूल की। मैं नहीं जानती थी कि तुम इस हद तक निकम्मे हो।"

"लेकिन मैंने आपके रास्ते में कभी कोई रुकावट नहीं डाली," वह मिमियाता हुआ बोला।

"रुकावट तुम क्या डालोगे," उसने तीखे व्यंग्य से कहा, "तुम नहीं जानते कि रुकावट से और रुकावट डालने वाले से मैं क्या व्यवहार करती हूँ ? क्या तुम चाहते हो, मैं तुम्हारे साथ भी वही सलूक करूँ ?"

"नहीं सरकार ! मैं मर जाऊँगा," वह गिड़गिड़ाकर बोला। मेरा क्या सहारा होगा ? मुझे कौन पूछेगा ? इस दुनिया में किस बूते पर जिऊँगा ?"

"तुम इन्शोरेंस का काम जारी रखो।"

"आपके बिना मुझसे इन्शोरेंस भी कौन कराएगा ? अब तो जहाँ जाता हूँ आपका नाम लेकर सफल हो जाता हूँ। ये चार-पाँच आदमी

ही दूसरों से कहकर बिज़नेस दिलवा देते हैं । फिर कौन पूछेगा ?"

"आज कितना पैसा लाए हो ?"

"सात सौ ।"

"कहाँ हैं ?"

"यह रहे," वह नोट दिखाते हुए बोला ।

"अच्छा, इन नोटों को मेज़ पर रख दो और तुम दिलेरसिंह के पास चले जाओ । उनसे सौ रुपये ले आना । हाँ देखो, एक घण्टे से पहले मत आना ।"

"बहुत अच्छा !"

"और जाते हुए जॉर्ज को मेरे पास भिजवा देना ।"

"ज़रूर," उसने कमरे से बाहर निकलते हुए कहा ।

अगले दिन सायंकाल के समय जब गौरीशंकर गौर उसके कमरे में प्रविष्ट हुआ तो चाँद ने पूछा, "क्या आप पिक्चर देखने नहीं गये ?"

"पिक्चर में मुझे क्या मिलेगा ?"

"और यहाँ......"

"......क्या नहीं मिलेगा ?"

दोनों हँस दिए।

"मेरा मतलब कि आपने इरादा बदल क्यों दिया ?"

"पिक्चर जाने का न ? इसलिए कि गौहर से मैंने प्रार्थना की कि आज वह चला जाय ताकि मैं आपकी संगति का आनन्द ले सकूँ।"

"यह तो आपने मुझ पर बहुत कृपा की।"

"आप उलटा कह रही हैं।"

"बिलकुल सच, गौर साहब ! आप विश्वास नहीं करेंगे। आपसे कल की भेंट के बाद न जाने कितनी बार आपके बारे में सोच चुकी हूँ।"

"मेरे विषय में ?"

"हाँ।"

"क्या ?"

"कि वह कितनी भाग्यवती लड़की होगी जिसे आपकी पत्नी बनने

का सौभाग्य प्राप्त हुआ है ।"

"और मैं कितना भाग्यवान हूँ कि आपसे भेंट का सौभाग्य प्राप्त हुआ ।"

"यह तो आपकी कृपा-विशेष है ।"

"आपमें कितना असीम सौन्दर्य है—बाह्य और आन्तरिक दोनों ।"

"आप लगे मेरी अकारण प्रशंसा करने ।"

"ऐसा कहकर मेरा दिल न दुखाइए," गौर बोला, "कल आपसे मुलाकात के बाद मैं अपने भाग्य को सराहता भी रहा और कोसता भी ।"

"सराहते और कोसते रहे—मतलब ?"

"सराहता इसलिए कि आपसे भेंट का अवसर प्राप्त हुआ और कोसता इसलिए कि इससे पहले क्यों न हुआ ?"

"ओह ! आप तो बहुत अनुभवी ह ।"

"पुलिस में हूँ न ।"

"वैसे आपके कितने बच्चे हैं ?"

"चार ।"

"चार !"

"तो इससे क्या होता है," गौरीशंकर बोला, "यदि आठ भी हों तो क्या ?"

"उससे आदमी फ्री नहीं हो सकता ।"

"क्यों नहीं हो सकता ?" उसने जेब से सिगरेट-बक्स निकालते हुए कहा, "आप मुझे ले लीजिए । पत्नी और बच्चे मेरे आनन्दमय जीवन में बिलकुल बाधक सिद्ध नहीं होते ।"

"कभी नहीं ?"

"कभी नहीं ।"

"मुझसे पहले आपकी किससे मुलाक़ात थी ?"

"मेरी ? क्या मतलब ?" वह झेंपकर बोला ।

"आप स्वयं ही तो कह रहे थे।"

"आप ग़लत समझीं। सेवक आपको विश्वास दिलाता है कि इस दर के सिवाय और कहीं माथा नहीं रगड़ेगा।"

"पैर ?"

"उसकी ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी," दोनों खिलखिलाकर हँस दिए।

जॉर्ज ने ट्रे में चाय लाकर रख दी।

"जार्ज !"

"जी मेम साहब !"

"आपको जानते हो ?"

"जी मेम साहब !"

"आप पुलिस के अधिकारी हैं। कल तुमने जो खाना बनाया, उससे बहुत प्रसन्न हुए और तुम्हें यह इनाम दे रहे हैं," वह एक पत्रिका के नीचे से दस रुपये का नोट निकालती हुई और उसकी ओर बढ़ाती हुई बोली।

"साहब ! इसकी क्या ज़रूरत थी ?" वह नोट को लेते हुए बोला।

"अच्छा, अब तुम जाओ। यहाँ बिन-बुलाये मत आना। यदि कोई आये तो कह देना........"

"कि बाहर गई हैं।"

"शाबाश जॉर्ज ! तुम बहुत अच्छे हो।"

और जब वह चला गया तो बोली, "बड़ा समझदार और वफ़ादार है।"

"आपका नौकर और वफ़ादार न हो। लेकिन यह आपने खूब किया, मुझे लज्जित ही कर दिया।"

"आपको क्यों ? नोट के कारण ? उसे क्या मालूम कि मैंने दिया है।"

"मुझे तो मालूम है।"

"मेरे और आपके पैसों में क्या अन्तर ?"

"तभी तो मैं कह रहा था कि आपमें बाह्य और आन्तरिक सौन्दर्य कूट-कूटकर भरा हुआ है।" वह मेज़ पर पड़े उसके हाथ को सहलाते हुए बोला।

"फिर लगे आप अकारण प्रशंसा करने।"

"प्रशंसा नहीं, वास्तविकता है।"

"अच्छा, इन बातों को तो खाने के बाद करेंगे। पहले आप मतलब की बात कीजिए।"

"यह सब बेमतलब था ?"

"मैंने कहा था कि खाने……"

"जैसी आपकी इच्छा। आपके मतलब की चीज़ मेरी जेब में है।" वह जेब से एक पत्र निकालते हुए बोला।

"तो अब तक आपने उसे दिखलाया ही नहीं," वह पत्र लेती हुई बोली।

"आपने अवसर ही कब दिया ?"

उत्तर देने के बजाय, वह पत्र पढ़ने लगी। वह चार पृष्ठ का छोटे साइज़ का अख़बार था—साप्ताहिक 'नया संसार'। प्रथम पृष्ठ पर मोटे-मोटे शब्दों में लिखा था—'एक स्थानीय अधिकारी की काली करतूत का भण्डा-फोड़।'

और तत्पश्चात् नाम के बग़ैर एक पुलिस-अधिकारी के चरित्र पर सख़्त प्रहार किया था। इस बात पर प्रकाश डाला गया था कि उसका एक स्त्री से अनुचित सम्बन्ध है और शासन से प्रार्थना की गई थी कि ऐसे धूर्त और दुष्चरित्र व्यक्ति को घोर दण्ड मिलना चाहिए और तुरन्त उसका स्थानान्तर कर देना चाहिए। यह भी घोषित किया गया था कि ऐसे व्यक्ति की काली करतूतों को पब्लिक के सामने लाने के लिए 'नया संसार' एक विशेषांक निकालेगा।

"यह विशेषांक कब निकल रहा है ?"

"बुधवार को। हमने यह निश्चय किया है, चूँकि इस अंक में

उसे भरपूर गाली नहीं दी जा सकी, एक विशेषांक द्वारा इस कमी को पूरा किया जाय।"

"तो यह 'शाद अंक' होगा ?"

"नाम तो यह नहीं होगा, हाँ आशय यही होगा।"

"सामग्री कहाँ से मिलेगी ?"

"यहाँ से।" उसने अपने मस्तिष्क की ओर संकेत करते हुए कहा।

"परन्तु यदि सब बातें फर्ज़ी होंगी तो विश्वास कौन करेगा ?"

"विश्वास कराने के लिए फर्ज़ी या असली बातों की महत्ता नहीं होती।"

"और किस बात की महत्ता होती है ?"

"उसे दुहराने की।"

"ठीक हो अथवा गलत ?"

"सरकार ! आप मानव-प्रकृति को नहीं समझतीं। लोगों में एक दुर्बलता होती है। वे प्रत्येक प्रकाशित बात पर विश्वास कर लेते हैं। वे अखबार में छपी बातों को भगवान् के वाक्य मानते हैं ?"

"और पत्रकार उसका पूरा लाभ उठाते हैं ?"

"अगर न उठायें तो उन्हें समझदार कौन कहे ? आखिर उनके भी तो पेट है, उनके भी तो बीवी-बच्चे हैं, उन्हें भी पैसा कमाने का अधिकार है।"

"लेकिन बड़े पत्र तो ऐसा नहीं करते होंगे ?"

"वे क्यों करने लगे ? उनके पास पैसे की कमी नहीं। वे किसी सिद्धान्त पर चलते हैं और उस सिद्धान्त पर दृढ़ रहते हैं। लेकिन 'नया संसार' जैसे पत्रों का क्या सिद्धान्त हो सकता है ? यदि कोई उसूल है तो वह पैसा है।"

" 'नया संसार' केवल पैसे कमाने के कारण छपता है ?"

"और किस कारण ?"

"क्या गौहर किसी सिद्धान्त को नहीं मानते ?"

"मानते हैं—पैसा कमाने के सिद्धान्त को।"

"कहाँ तक पढ़े-लिखे हैं ?"

"पाँचवीं कक्षा तक।"

"केवल ?"

"और नहीं तो क्या ? 'नया संसार' के लिए इससे अधिक शिक्षा की आवश्यकता भी नहीं।"

"हाँ, ऊँची शिक्षा तो गालियों के मार्ग में बाधक होती है।"

"बिलकुल," गौरीशंकर ने कहा।

'परन्तु आप तो शिक्षित है। आप उसके साथ कैसे मिल गए ?"

"अपने मतलब के लिए।"

"आपका मतलब क्या ?"

"चाँद जी, संसार में प्राय: सभी व्यक्ति स्वार्थी हैं। मेरी और गौहर की मित्रता शिक्षा नहीं, स्वार्थ पर आधारित है। मै उसे भिन्न-भिन्न ऑफ़िसों के भेद और फ़ाइलें लाकर देता हूँ। बड़े-बड़े अधिकारियों के विषय में उनके व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित स्कैण्डल इकट्ठे करता हूँ। उन्हें व्यवस्थित करके 'नया संसार' में लिखता हूँ। इसका बड़ा लाभ तो यह है कि एक पत्र अपने हाथ में है। इससे शत्रुओं की खबर ली जा सकती है। मंत्रीगण इस बात से परिचित है कि मेरा एक पत्र से सम्बन्ध है। इस नाते वे मेरा बहुत सम्मान करते है।"

"कैसे ?"

"कोई ऐसा अवसर नही होता जिसमें मुझे आमन्त्रित न करें। कोई डिनर हो अथवा लंच, गार्डनपार्टी हो या ऐट होम, मेरे नाम अवश्य निमन्त्रण आएगा।"

"इतनी पार्टियाँ होती है ?"

"आजकल पार्टियाँ ही तो होती हैं। हों भी क्यों न ? अधिकांश मन्त्रियों के भाग्य में इससे पूर्व यह सब कहाँ बदा था ? और फिर यह मौज कहाँ रहेगी ? फिर ऊपर से जो बड़े मन्त्री या अधिकारी आते है,

उनको उत्तम खाना न खिलायें तो मुश्किल और अगर प्रेस की उपेक्षा करें तो और भी मुसीबत।"

"तब तो मज़ा है।"

"यही नहीं, अनेक बार मन्त्री महोदय मुझे दिल्ली ले जाते हैं। कई बार कांग्रेस सेशन अटेंड करने ले जाते हैं। आजकल भारतीय राजनीति में एक नया शब्द अधिक प्रचलित है—उद्‌घाटन। कोई ऐसा मास, बल्कि सप्ताह नहीं होता, जब कहीं पर किसी बात का उद्‌घाटन न होता हो। स्कूल या अस्पताल, नाली या तालाब, बगीचा अथवा बालविहार, दुकान अथवा अखबार, न जाने किस-किस चीज़ का उद्‌घाटन उन्हें करना पड़ता है। वहाँ भाषण देने और फोटो खिचवाने का कितना अच्छा अवसर मिलता है और यदि ये भाषण और फोटो अखबारों में न छपें, उनका लाभ ही क्या? और छपे तब यदि छापने वाले प्रसन्न हों और वे तभी प्रसन्न हो सकते हैं यदि उन्हें मुफ़्त की सैर मिले और उत्तम खाना।"

"तब तो आप सचमुच ऐश करते हैं।"

"और कभी-कभी जब मन्त्री महोदय को अपने विषय में अधिक पब्लिसिटी करानी हो तो वे हम लोगों को हवाई जहाज़ की सैर करा देते हैं।"

"हवाई जहाज़ की? आपको?"

"जी हाँ, खादिम को। अभी गत सप्ताह रायगंज में एक चुकंदर के व्यापारी की दुकान का उद्‌घाटन था, मन्त्री महोदय दो पत्रकारों आर मुझे अपनी साथ ले गए।"

"फिर?"

"फिर क्या? हमारा वह भव्य स्वागत हुआ कि क्या कहूँ?"

"आपको लोगों ने क्या समझा?"

"पत्रकार।"

"फिर तो पत्रकार बनना घाटे का सौदा नहीं।"

"घाटे का ? आप क्या कह रही हैं ? आज के युग में इससे बढ़कर मज़ा उड़ाने के लिए और कोई प्रोफ़ेशन ही नहीं।"

"आप बहुत बुद्धिमान हैं, साथ ही भाग्यवान् भी।"

"केवल 'नया संसार' के कारण और इसी सबब दुश्मन जलते हैं।"

"दुश्मन तो सदा जलते हैं। उनका तो काम ही यही है।"

"और मैं उनकी छाती पर मूँग दलता हूँ।"

"कैसे ?"

"शहर में मन्त्रियों के साथ सरकारी गाड़ी में घूमता हूँ। स्टेशन पर उनके साथ जाता हूँ और ट्रेन में उनके साथ रहता हूँ। दावतों में हमेशा बुलाया जाता हूँ। अब इन सब बातों से उनका दिल क्यों न जलता होगा ?"

"परन्तु लोग तो खूब रौब मानते होंगे ?"

"क्या कहने ?" गौरीशंकर बोला, "घर पर लोगों की भीड़ लगी रहती है। किसी-न-किसी काम से वे आते रहते हैं। फ़ोन की घण्टी बन्द ही नहीं होती।"

"तो आपके पास फ़ोन भी है ?"

"आपकी कृपा से।"

"सरकारी ?"

"निजी।"

"तो आप इतना रुपया अपनी जेब से खर्च करते हैं ?"

"अब यह भी एक रहस्य है। सब बातें न पूछिए।"

"समझी। तो वजीरों से मित्रता का आप खूब फायदा उठाते हैं।"

"अगर न उठाऊँ तो मूर्ख कहलाऊँ," गौर ने उत्तर दिया, "पहले तो लोगों को सिफ़ारिश का मूल्य चुकाना होता है।"

"सिफ़ारिश का मूल्य ?" चाँद ने विस्मित होकर पूछा।

"और नहीं तो क्या ? अब हमें क्या कुत्ते ने काटा है कि मुफ्त में लोगों की सिफ़ारिश करते फिरें ? फिर अपने सम्बन्धियों और मित्रों को

नौकरी दिलवाई ज सकती है, अपने भाई-भतीजे के लिए दुकान खुलवाई जा सकती है। किसीको मोटर का परमिट और किसीको एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट लाइसेंस दिलवाया जा सकता है।"

"परन्तु यदि शत्रु लोग यह प्रोपेगंडा करें कि आप इस प्रकार सरकारी नौकर होकर अनुचित फायदा उठा रहे हैं तो ?"

"इससे क्या होता है ? शत्रु के लिए हम कौन कम हैं ?"

"परन्तु शाद का आप कुछ नहीं बिगाड़ सके ?"

"इसका कारण है।"

"क्या ?"

"उसकी पुश्त पर एक बड़ा आदमी है।"

"कौन ?"

"हमारे विभाग का उच्चाधिकारी।"

"वह मन्त्री से भी बड़ा है ?"

"बड़ा तो नहीं, लेकिन एक तो कुछ नेता लोग उसकी पुश्त पर हैं......"

"इसीलिए आपको कठिनाई पेश आ रही है।"

"दूसरे, कवि होने के नाते भी उसका मान-सम्मान है। अब से पहले इन बातों को कौन पूछता था ? शेरो-शायरी की कौन परवाह करता था ? लेकिन आज कुछ मूर्ख न जाने क्यों इन बातों को महत्ता दे रहे हैं। ऐसे आदमियों का सम्मान करते हैं और ये साहब अपने-आपको बड़े कवि कहते हैं।"

"तो इनके विरुद्ध 'नया संसार' के प्रोपेगंडा से कोई अन्तर नहीं पड़ेगा ?"

"पड़ना तो चाहिए और हमने तो अभी आरम्भ किया है। किसी बात की चिन्ता क्यों करें ?"

"पब्लिक में इसका असर तो ज़रूर पड़ता होगा ?"

"क्यों नहीं ? आज ही हॉकर गलियों में चिल्लाते फिरते हैं, शीर्षक

ऊँची आवाज में पढ़कर सुना रहे हैं। इससे पत्र की सेल पर अच्छा असर पड़ता है और साथ ही उस व्यक्ति की कितनी बदनामी होती है।"

"लेकिन क्या वह इस हमले से डर जायगा ?"

"नहीं डरेगा तो डरायेंगे ।"

"और यदि उसने हथियार न डाले तो ?"

"हथियार डालने पर मजबूर करेंगे और कोई कसर नहीं उठा रखेंगे," वह कुछ सोचकर बोला, "लेकिन हथियार डालने से आपका क्या मतलब है ?"

"मतलब······मतलब······मतलब क्या ? बस हथियार डाल दे।"

"कौनसे हथियार ?"

"यह तो मुहावरा है। मतलब केवल यह कि······मैं उसकी अकड़ तोड़ना चाहती हूँ।"

"इससे क्या होगा ? और दूसरे उसकी अकड़ तोड़ने का मतलब केवल एक है।"

"क्या ?"

"उसे नौकरी से अलहदा करवा दिया जाय।"

"नौकरी से ?"

"और अगर वहाँ सफलता न मिले तो······"

"तो क्या ?"

"नहीं समझीं ?"

"समझ गई," वह गम्भीर मुद्रा में बोली, "लेकिन वह उचित नहीं। हम क्यों ऐसा सोचें ?"

"क्यों न सोचें ? शत्रु आखिर शत्रु है। या तो हम उससे लड़ाई मोल न लेते और हमला करने की शुरूआत न करते। एक बार हमला करके हम पीछे नहीं हट सकते। पीछे हटने का मतलब है मुसीबत और शायद तबाही।"

"वह कैसे ?"

"इसलिए कि वह खतरनाक दुश्मन है। हमें कभी क्षमा नहीं करेगा।"

"उसे यह कैसे पता चल सकता है कि इसमें हमारा हाथ है ?"

"कैसे नहीं पता चल सकता ? वह पुलिस का अधिकारी है। कब तक ये सब बातें उससे छिपी रह सकती हैं ?"

"तब तो······"

"बस अभी से घबरा गईं ? अभी तो इब्तिदाये-इश्क़ है जनाब !"

"लेकिन हमने एक बड़ा खतरा मोल लिया है," वह घबराकर बोली।

"इश्क़ में तो बड़े-बड़े खतरे मोल लेने होते हैं।"

"इश्क़ ?"

"मैं सब समझता हूँ, सरकार ! लेकिन इसमें घबराने का कोई कारण नहीं। उसने आपके सामने झुकने से इन्कार कर दिया, बन्दा उसके सिर को झुकने के लिए मजबूर करेगा और यदि न झुका सका तो उसे तोड़कर रख देगा।"

"तोड़कर ?" वह घबरा उठी।

"बिलकुल। विद्रोही सिर का और इलाज ही क्या होता है ? इसके लिए मुझे आपकी सहायता की ज़रूरत पड़ेगी। और मै जानता हूँ कि जो काम हम अकेले नहीं कर सकते, दोनों मिलकर अच्छी तरह कर सकेंगे।"

"आप उसके इतना क्यों खिलाफ़ हैं ?"

"वह मेरी उन्नति के मार्ग में बाधक है, मेरे रास्ते का रोड़ा है, मेरा प्रबल शत्रु है। मैं उसे किसी हालत में बर्दाश्त नहीं कर सकता।"

"तब आप उसे ख़त्म करना चाहते हैं ?"

"बिलकुल।"

"और अगर आप उसमें सफल न हुए तो ?"

"आपकी सहायता से सफलता न मिले, मैं ऐसा सोच तक नहीं

सकता।"

"शाबाश! मेरे शेर, शाबाश!" वह प्रसन्न होकर बोली, "मैं तुम्हारा परीक्षण ले रही थी। तुम इसमें पूरे उतरे। मुझे तुम्हारे जैसे साथी की खोज थी। तुम सच कहते हो, जो काम हम अकेले नहीं कर सकते थे, दोनों मिलकर करेंगे।"

"यद्यपि उसमें दूसरों की सहायता लेनी पड़ेगी।"

"दूसरे कौन?"

"हमारे दफ़्तर के कुछ लोग।"

"क्या नाम पूछ सकती हूँ?"

"उनमें से एक तो ऑफ़िस के इन्चार्ज हैं, देवकी प्रसाद।"

"उसका नाम तो सुना है, नहीं उसे देखा भी है। बूढ़ा खूसट है। हमेशा लम्बा कोट और पायजामा पहने रहता है। वह भला क्या कर सकता है?"

"यदि वह नहीं कर सकता तो कोई भी नहीं कर सकता। वह बड़ा काइयाँ है। उस जैसा शैतान मैंने आज तक नहीं देखा। उसकी ज़बान से शहद टपकता है और दिल से ज़हर। उससे बात करते समय दूसरा यह समझता है कि वह सौजन्य से पूर्ण मानव है, वास्तव में वह शरारत से भरा हुआ दानव है।"

"एक दिन शमसुद्दीन बतला रहे थे कि वह बहुत तेज़ है। हर चीज़ में घूस खाता है। बात-बात में पैसा वसूल करता है। दफ्तर की लारियों में से पैट्रोल चुराता है।"

"मोबिल आइल भी। उसकी क्या पूछती है आप? वह किस चीज़ में से नहीं खाता? उसके लिए सब-कुछ हलाल है। लारियों में से उसकी अच्छी आय है। स्टाफ़ का तबादला कराने की उसकी स्थायी आमदनी है।"

"तबादला कराने की?"

"हाँ, वह झूठ-मूठ सब पर रौब कसता है कि उसके तबादले की बात

चल रही है और वह साहब से कहकर उसे रुकवाने की कोशिश कर रहा है।"

"खूब !"

"इन मामलों में उसका असिस्टेंट गोवर्धन प्रसाद उसकी मदद करता है।"

"वह कौन है ?"

"उसका भी गुरू। वह बड़े-बड़े तिलक लगाता है, ताकि अपनी दुष्कृतियों को छिपा सके। प्रातः चार बजे उठकर नहाता है, पाठ करता है। फिर सरकारी तौर पर भगवान् से आज्ञा लेकर बेईमानी शुरू करता है। तबादलों के काम में वह ऐक्सपर्ट है। सिपाही उसके घर घी के टीन और गेहूँ के बोरे पहुँचाते हैं, नक़द रुपया देते हैं। घूस लेते समय उसकी आत्मा को कोई कष्ट नहीं पहुँचता। वह जानता है कि अगले दिन प्रातः वह भगवान् से सब पाप माफ़ करा लेगा। दरअसल वह अपने काम की कीमत वसूल करता है। यह तो बिज़नेस है। इस हाथ ले, उस हाथ दे—तबादला रुकवा लो और मूल्य दे दो।"

"कितना ?"

"यह तो तबादले पर निर्भर है—पाँच भी और पचास भी। और इस रुपये को वह देवकी प्रसाद के साथ आधा-आधा बाँट लेता है।"

"क्या इस बात का पता नहीं चलता ?" चाँद ने पूछा।

"पता चलता है, तभी तो बतला रहा हूँ।"

"उन्हें दण्ड नहीं मिलता ?"

"यदि दण्ड मिलता तो हम उन्हें अपने काम के लिए कैसे इस्तेमाल कर सकते हैं ? एक-दो बार बुरी तरह मेरे शिकंजे में फँस गए। मैंने उनकी चोरी पकड़ ली। इस पर वे दोनों मेरे घर आये और अनुनय-विनय करने लगे। मैंने उनकी बात सुनने से इनकार कर दिया। उन्होंने अपनी-अपनी टोपी उतारकर मेरे पाँव पर रख दी। मुझे गुस्सा तो बहुत आया, लेकिन पी गया। वे मेरे पाँव पर सिर रखकर ज़मीन

पर लेट गए और एड़ियाँ रगड़ने लगे। मुझे घृणा-सी होने लगी। मैं यह सोच तक न सकता था कि ये लोग इस हद तक गिर सकते हैं। फिर मैंने सोचा कि इन्हें माफ़ करके इनकी मित्रता खरीदी जा सकती है, मुक़ामी आदमी होने के कारण उनसे पूरा लाभ उठाया जा सकता है। अतः मैंने क्षमा कर दिया और केस को दबा दिया। अब हम उन्हें अपने मतलब के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं।"

"तो कल उन दोनों को यहाँ बुलवाइए।"

"मैं साथ लेता आऊँगा।"

"लेकिन हम चाय तो पियें।"

"चलिए।"

"हम इनके साथ एक प्रेक्टिकल व्यंग्य करें," चाँद ने प्रस्तावित किया।

"कैसे ?"

"ये हमें छोड़कर पिक्चर गये हैं। हम इन्हें छोड़कर चलें।"

"दूसरे शो में ?"

"और क्या तीसरे में ?"

"अभी तो बहुत समय है। तब तक क्या करे ?"

"चाय के बाद बाग में घूमने चलेंगे, खाना बाहर ही किसी होटल पर खाएँगे, तत्पश्चात् पिक्चर देखने चलेंगे।"

"हम दोनों ?"

"और कौन ? आपको स्वीकार नही ?"

"आपकी संगति और मुझे स्वीकार न हो ? टिकट ?"

"आप शायद नहीं जानते कि रीगल सिनेमा में हमारा बक्स रिज़र्व है।"

"आपका ?"

"आप अच्छे पुलिस अफ़सर हैं। जनाब ! राय साहब की मित्रता का क्या फायदा ? रीगल सिनेमा के वह डायरेक्टर हैं।

"अच्छा ! यह बात ! अब समझा ।" तो ये लोग भी उसी बक्स में गये है ?"

"यह कैसे हो सकता है ? वे सब प्लाज़ा गये है । मैने आपके साथ वहाँ जाने की पहले ही सोच रखी थी ?"

"परन्तु इस समय तो यहाँ आने का गौहर का प्रोग्राम था ।"

"आपकी बारी कल आ जाती ।"

"अब उसकी बारी कल आएगी ।"

"जी जनाब !"

और वे दोनों अट्टहास से हँस दिए, जैसे एक-दूसरे को खूब पहचानते हों ।

बिस्तर पर लेटते ही बैकुण्ठ की आँखों के सामने सारी घटनाएँ एक-एक करके तैरने लगतीं और नाटक के चरित्र घूमने लगते। उसके लिए उनकी जिन्दगी एक समस्या से कम न थी और उसने उसे सुलझाने का कई बार असफल प्रयास किया। उन्हें देखकर वह हैरान होता। शमसुद्दीन भी एक अजीब व्यक्ति थे। वह पचपन से ऊपर थे। उनके सब दाँत टूट चुके थे और नक़ली दाँत लगे हुए थे। सिर के बाल प्रायः झड़ चुके थे, हाँ इर्द-गिर्द कहीं-कहीं एक-आध बाल नजर आता, जैसे बुरे दिन आने पर किसी बड़े घराने में एक-आध पुराना आज्ञाकारी (वफ़ादार) नौकर नजर आए। वैसे तो वह ऐनक के बिना निर्वाह करते, लेकिन पढ़ने के लिए इसके बगैर काम न चलता। वह दुबले-पतले शरीर वाले, लेकिन फुर्तीले व्यक्ति थे। शालीनता उनमें कूट-कूटकर भरी थी। अधिकांश सरकारी अधिकारियों के समान उनके बर्ताव के दो ढंग थे—एक अफ़सरों से, दूसरा मातहतों से। जितनी शालीनता से वह अपने से बड़े अधिकारियों से पेश आते, उतनी सख्ती से अपने अधीनों से सलूक करते। यदि वह बड़ों के सम्मुख झुकना अपना कर्तव्य मानते थे तो छोटों को अपने सामने झुकाना भी अनिवार्य समझते थे। उन्होंने एक के बाद दूसरा, फिर तीसरा विवाह किया। प्रत्येक पत्नी से एक लड़का था। एक लड़का कैनेडा में नौकरी करता था, दूसरा बर्मा में, तीसरा शहर में एक प्राइवेट फर्म में काम करता था। बाहर रहने वाले दोनों लड़कों की पत्नियाँ अपने ससुर के घर रहती थी।

इन्स्पेक्टर साहब मानव-स्वभाव से भली भाँति परिचित होने के कारण पैसों के मामले में बड़े कोरे थे। तीनों बहुएँ अपना-अपना खाना बनातीं। ससुर का खाना जुदा बनता। सबका अपना-अपना हिसाब होता। दोनों बड़ी बहुओं ने अपना-अपना नौकर अलग रखा हुआ था। इन्स्पेक्टर साहब और सबसे छोटे लड़के नूर इलाही का साझी नौकर था। उनके घर कभी किसीने झगड़ा होते हुए नहीं सुना, कभी किसी स्त्री के ऊँचा बोलने की आवाज़ नहीं सुनाई दी। मुहल्ले में दूसरे सम्मिश्रित परिवारों में प्रतिदिन कलह रहता, औरतें एक-दूसरी से गाली-गलौज करतीं। तत्पश्चात् मुहल्ले की स्त्रियों में इन झगड़ों का वर्णन होता। उनके घरों की एक-एक बात लोगों की ज़बान पर होती। लेकिन शमसुद्दीन के घर की एक बात भी किसीके कान तक न पहुँचती। इन्स्पेक्टर साहब सदा अपने कमरे में खाना खाते। हर रोज़ खाना पक-कर समय पर उनके कमरे में आ जाता। उनका नौकर उनके स्वभाव को भली भाँति जान गया था। उसे वह कभी न डाँटते, लेकिन दफ़्तर के चपरासियों के साथ उनका दूसरा ही व्यवहार था। उनसे डाँट-डपट से काम लेते और कभी-कभी तो उनसे बहुत कठोर व्यवहार करते।

चाँद रानी से मित्रता के विषय में उनके घर के सब लोग जानते थे। इन्स्पेक्टर साहब ने स्वयं ही उनका परिचय घर पर सबसे करवा दिया था और वह बहुधा उनके घर आती-जाती रहती थीं। बैकुण्ठ उसके साथ होता और कभी-कभी केसरचन्द भी। शमसुद्दीन की पत्नी चाँद रानी से दिल मे जलती, लेकिन उसे ज़ाहिर न होने देती। उसे हमेशा सन्देह रहता कि उसका पति, उससे चोरी-छिपे, इस औरत को कुछ-न-कुछ देता रहता था। तनख्वाह का हिसाब तो उन्होंने कभी घर पर दिया ही न था, इसलिए पैसों का पता लगाना सम्भव न था। घर से ले जाकर वह कोई वस्तु उसे देते नहीं थे, जबकि बाज़ार से खरीदकर चीज़ें दी जा सकती थीं। गहने कुछ वह पहने रहती, लेकिन बाक़ी कीमती गहने बैंक में जमा करा रखे थे। उसे इस बात

का शक रहता कि कहीं वह उसके गहने बैंक से निकालकर उस औरत को न दे आए। एक दिन उसने अपने पति से कहा कि अपने भतीजे की शादी में सम्मिलित होने वह गाँव जा रही है और उसे गहनों की ज़रूरत पड़ेगी। इन्स्पेक्टर साहब को पहले इस विवाह का पता नहीं चला था। दरअसल किसीको मालूम नहीं था। यह शादी अचानक तय हुई थी। कई दिन तक तो वह टालमटोल करते रहे, लेकिन उनकी पत्नी ज़िद करने लगी। एक दिन वह तंग आकर बोली, "क्या गहने किसीको दे दिये ?"

"क्या मतलब ?"

"अगर बैंक में होते तो लाने में क्या कठिनाई थी ?"

वह चुप रहे।

"मैं सब समझ रही हूँ तुम गहने उस कलमुँही को दे आए हो ?"

"तुम कैसी बात कर रही हो ?" शमसुद्दीन बोले।

"मुझे सब पता चल गया है।"

"किससे ?"

"बैंक वालों से," उसने गप हाँकते हुए कहा।

"उन्होंने तुम्हें कैसे बतलाया ?"

"सच्ची बात फैलने में देर नहीं लगती। किसी बाबू ने दूसरे से बात की होगी और बस।"

"उसे इससे क्या मतलब ? बदज़ात कहीं का।"

"लेकिन आपने मेरे गहने क्यों दिये ?"

"किसे ?"

"उस चुड़ैल को।"

"उसे नहीं दिये।"

"फिर किसे दिये हैं ?"

"बैंक को।"

"क्यों ?"

"पैसों की ज़रूरत थी।"

"किस लिए ?"

"किसीको देने थे।"

"उसी राँड को ?"

"गाली क्यों देती हो ?"

"और क्या उसके सुहाग के गीत गाऊँ ?" नूर बी रोती और चिल्लाती हुई बोली, "आपने मुझे तबाह कर दिया। मुझे उस चुड़ैल के हाथों लुटा दिया। अब मैं कहीं की नहीं रही। मैं लुट गई।" वह रोने और चिल्लाने लगी। उसका क्रन्दन सुनकर सब घरवाले इकट्ठे हो गए—बहुएँ और बच्चे। नूर इलाही घर पर नहीं था। शमसुद्दीन द्विविधा में पड़ गए। आज पहली बार वह पकड़े गए थे। उन्हें इस बात का विचार ही नहीं आया, नहीं तो कोई और प्रबन्ध कर लेते। आज वह बुरी तरह फँसे। फिर सबके सामने इतनी हेठी। अगर बात शहर में फैल जाय तो और मुसीबत। करे तो क्या करे ? उस रात वह दौरे पर चले गए और कई दिन तक न लौटे, न ही घर कोई पत्र लिखा। अब घर वालों को उनकी चिन्ता हुई। सब नूर बी को कोसने लगे कि कुछ हज़ार रुपयों के जेवरात के लिए उन्हें घर से भाग जाने पर विवश किया। और यदि उन्हें कुछ हो गया तो ? बैकुण्ठ को सारी घटना की सूचना उनके नौकर से मिली। नूर बी ने भी रोते-रोते सारी बात बताई और कहने लगी—

"भैया, उनका पता लगाओ। उनसे जाकर मिलो और मेरी ओर से उन्हें विश्वास दिलाओ कि जेवरात का ज़िक्र तक न करूँगी। लेकिन तुम खुद ही बतलाओ कि कसूर मेरा है या उनका ? मुझसे पूछकर ऐसा करते तो क्या मै इन्कार करती ? लेकिन किस औरत को जेवरात प्यारे नहीं होते ? फिर मुझे क्या पता था कि वह इस प्रकार रूठ जायँगे। तुम आज ही जाओ। यह लो किराया।" वह दस-दस के दो नोट देकर बोली, "उन्हें ढूँढ़कर और मनाकर लाओ।"

उस दिन बैकुण्ठ को इन्स्पेक्टर साहब के इस रहस्य का पता चला था। अब तक यह बात उस पर न खुली थी। लेकिन इस घटना ने उसे और भी विस्मित कर दिया। एक आदमी एक स्त्री के प्रेमपाश में फँसकर क्या कुछ नहीं कर सकता? लेकिन ऐसी स्त्री के लिए कौन इतनी मुसीबत मोल लेगा? जब वह जानता है कि वह केवल उसीकी नहीं, उस जैसे कई दूसरे भी उससे गहरे सम्बन्ध रखते हैं। परन्तु उसने इन सब पर कितना जादू डाल रखा है। उसकी शक्ति को तो मानना ही पड़ेगा। और उसके पति की शक्ति को? वह पति था ही कहाँ? वह तो एक नौकर था। किन्तु नौकर तो जॉर्ज था और पति से अधिक तो उसके अधिकार थे। उसे असली पति पर दया आने लगी। दया अथवा घृणा? घृणा करने का उसका क्या अधिकार था? लेकिन ऐसे आदमी से और क्या व्यवहार किया जा सकता है? जो अपने घर पर भी नगण्य हो, जो पत्नी के सामने नौकर बनकर रहे जहाँ नौकर के उससे अधिक अधिकार हों, जो हर समय अपमान करने को तैयार हो। वह आदमी ही क्या? दर असल वह आदमी था ही नहीं—बैकुण्ठ ने सोचा। उसके शरीर में नसें नहीं थीं, नसों में रक्त नहीं था और उसके दौरा करने का प्रश्न ही नहीं उठता था। घर में अन्य व्यक्तियों के आने से उसके स्वाभिमान को कोई ठेस नहीं पहुँचती थी। उलटा उन्हें देखकर वह प्रसन्न होता, उन्हें घर में अपनी पत्नी के पास छोड़कर स्वयं बाहर चला जाता, यदि उसकी पत्नी के सिर में दर्द होता तो दवाई लाने के बजाय वह स्वयं वहाँ से हट जाना ही इलाज समझता ताकि कोई उसका सिर दाब सके—शमसुद्दीन अथवा परवाज़, दिलेरसिंह अथवा रायसाहब, वह स्वयं अथवा जॉर्ज। और जहाँ एक और व्यक्ति के इन्कार करने से उनकी कोशिश उसी ओर लगी हुई थी—उसे झुकाने के लिए, उसे आस्ताने पर लाने के लिए और सूची में एक नाम बढ़ाने के लिए। इस काम के लिए वह कितनी प्रयत्नशील थी! इसके लिए दो और व्यक्तियों की सेवा प्राप्त की गई, तो और नये धूर्त उनके साथ सम्मिलित हुए—गौरीशंकर गौर

और मातादीन गौहर। उसका नाम था गौर और वह था कितना काला ! उसका हृदय उसके चेहरे से कितना कुरूप था ! और मातादीन गौहर की आकृति पर उसके हृदय के दाग़ थे। उस पर माता (सीतला) अथवा चेचक अपने चिह्न छोड़ गई थी। दोनों एक व्यक्ति को तबाह करने के लिए एक स्त्री से आ मिले थे। स्त्री क्या थी, स्त्री जाति पर एक कलंक थी। तीनों एक व्यक्ति के ध्वंस पर तुले हुए थे और तीनों का ध्येय पृथक् था। गौरीशंकर को उससे प्रोफेशनल प्रतिस्पर्धा थी। वह जीवन में स्वयं आगे नहीं बढ़ सकता था, दूसरों को आगे बढ़ते देख नहीं सकता था। जब दौड़ में प्रतिद्वन्द्वी से आगे नहीं निकल सकता था, वह उसे टाँग से पकड़कर नीचे गिराने की कोशिश कर रहा था। उसकी सबसे प्रबल इच्छा यही थी कि उसे पूर्णतया परास्त कर दे। इस चिन्ता ने उसे पागल बना रखा था। अपने शत्रु को चारों खाने चित गिराने में वह हर सम्भव शस्त्र को प्रयोग करने के लिए उद्यत था। केवल कृष्ण को देखकर उसका जी जल जाता, उसकी छाती पर साँप लोटने लग जाता और उसके समस्त शरीर में बिजली कौंध जाती। वह उसके अंग-अंग को हिला देती, उसके अन्दर तड़प पैदा कर देती। केवल कृष्ण में एक नहीं, कई दोष थे। वह गौरीशंकर से अच्छे कुटुम्ब से सम्बन्ध रखता था। जहाँ गौरीशंकर ने एक सिपाही की हैसियत से जीवन आरम्भ करके मौजूदा पोज़ीशन हासिल की थी, केवल कृष्ण कॉलेज से निकलते ही इस पोस्ट पर नियुक्त हो गया था। जहाँ एक लगातार दस वर्ष के परिश्रम से इतने वेतन पर पहुँच सका था, दूसरा एकदम उससे अधिक वेतन पर नियुक्त हुआ था। यही नहीं, जहाँ प्रकृति ने केवल कृष्ण को शक्ल देते समय उदारता से काम लिया था, वहाँ उसके अपने साथ कंजूसी का व्यवहार किया था। केवल कृष्ण सुन्दर युवक था—लम्बा कद, गोरा रंग, भरा हुआ शरीर। एक मुस्कान हर समय उसके मुख पर नाचती। जिससे वह एक बार बात करता उसे अपना अनुयायी बना लेता। कॉलेज में लड़कियाँ उससे बात करने को तरसतीं, लेकिन वह

उनसे बचता, दूर रहता। खेल-कूद में भी वह खब रुचि लेता। उसे हॉकी और टैनिस से प्यार था। जहाँ गौरीशंकर सारा दिन ताश के पत्तों को सँभाले बैठा रहता, केवल कृष्ण ताश को घृणा की दृष्टि से देखता था। इस पर वह एक विख्यात कवि भी था। उसके काव्य में गहराई थी। अपने काम में वह पूर्णतया कुशल था। वैसे तो काम में गौरीशंकर भी कम प्रवीण न था। उसे पर्याप्त अनुभव हो चुका था। लेकिन जहाँ तक दूसरी विशेषताओं का सम्बन्ध था, वह अपने प्रतिद्वन्द्वी के पास तक न फटक सकता था। सौंदर्य उसे छू तक न गया था और साहित्य से उसका दूर का सम्बन्ध न था। हाँ, वह महत्त्वाकांक्षी अवश्य था। उसकी प्रबल इच्छा यह थी कि वह सत्ता प्राप्त करे। इसके लिए वह राजनीतिज्ञों से सम्बन्ध बनाये रखता, राजनीतिक दलों से जान-पहचान रखता। इलेक्शन में इनडाइरेक्ट ढंग से भाग लेता और पत्रकारों का साथ न छोड़ता। वह अखबारबाजी भी करता। यद्यपि अखबारबाजी में वह सामने न आता, लेकिन जानने वाले इस बात को जानते थे। सत्तारूढ़ तथा विरोधी दल भी इस बात से भली भाँति परिचित थे। इसी कारण जान-बूझकर कोई उसके मुकाबले न आता था, अकारण उससे उलझता न था। दरअसल उसकी न्यूसेंस वेल्यू थी, और इसीलिए कोई भी उससे खाहमखाह टकराना न चाहता था। वह इस बात को समझता था और इस पोजीशन से पूरा लाभ उठाता।

दूसरा आदमी मातादीन गोहर था। उसे केवल कृष्ण से कोई व्यक्तिगत शत्रुता न थी। गौरीशंकर की मित्रता प्राप्त करने के लिए वह केवल-कृष्ण का विरोध करता था। वह जानता था कि उसकी सहायता से सरकारी विज्ञापन प्राप्त करने में आसानी होगी। दरअसल उसे पैसे की जरूरत थी। पैसे की जरूरत तो सबको होती है, लेकिन दूसरों के पास पैसा कमाने के साधन होते हैं। आदमी के पास शिक्षा हो अथवा कौशल। शिक्षा से तो वह वञ्चित था, हाँ कौशल उसमें अवश्य था—गाली गढ़ने और गाली देने का कौशल। पत्रकारिता के सिद्धान्त होते

हैं, उनकी कोड होती है, और आजकल तो विशेषत: इस कोड पर अमल करने के लिए बल दिया जाता है। लेकिन जो उस कोड का मतलब न समझे, या जान-बूझकर समझने से इन्कार कर दे और जब विशेषत: उसका कुछ बिगाड़ा न जा सके, तो वह उससे अवश्य लाभ उठाता है। सम्पादक के कर्तव्यों अथवा समाज और देश के प्रति उसके दायित्व के सम्बन्ध में मातादीन ने कभी विचार नहीं किया था और न विचार करने की उसमें क्षमता थी। देश-विदेश के हालात को जानना, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक समस्याओं को समझना उसके बस का रोग न था। अब अपने देश में तो एम०ए० की डिग्री प्राप्त करने के बाद भी प्राय: लोग इन बातों में कोरे रहते हैं। बेचारे मातादीन से इतनी बड़ी-बड़ी बातों की आशा रखना अन्याय नहीं तो और क्या था? लेकिन यह पेट बड़ा मूजी है। उसे भरना भी तो ज़रूरी है। और यह आदमी से क्या-क्या काम नहीं कराता? लोग बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। आत्मा-परमात्मा पर उपदेश करते हैं। परलोक को सुधारने की शिक्षा देते हैं। लेकिन वे यह नहीं जानते कि आत्मा और परमात्मा से कहीं ज्यादा ज़रूरी यह पेट है और परलोक से अधिक महत्त्वपूर्ण यह लोक है। भविष्य से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण वर्तमान है। लेकिन यदि लोग इस सत्य को नहीं समझ सकते तो इसमें बेचारे मातादीन का क्या दोष? वह इन प्रचारकों और उपदेशकों से कहीं अधिक स्थिति को समझता था। सिद्धान्त से कहीं ज्यादा उसे वास्तविकता से प्यार था। और वास्तविकता पैसा माँगती थी। पैसा किसी ढंग से कमाया जा सकता था और उस ढंग को उसने पा लिया था। आखिर गालियाँ खाने और गालियाँ देने की इस लम्बी प्रैक्टिस को वह आदर्शवाद के धोखे में आकर क्यों इस तरह फेंक देता? एक ऐसे उत्तम साधन का प्रयोग करने से क्यों इन्कार करता? जब गालियाँ देकर उसे पैसे मिलते हैं तो उन्हें क्यों अस्वीकार करे? जब उनकी बदौलत उसका पेट भरता है तो उसे क्यों न भरे? पैसा दो और गाली दिलवा लो। व्यक्तित्व से

उसे कोई सम्बन्ध न था, बड़ों के नाम से उसे कोई वास्ता न था। अब तो उसे अच्छा फाइनेंशर भी मिल गया था और फाइनेंशर भी कितना मजेदार था ! अब यदि वह स्थिति का अपने स्वार्थ के लिए उपयोग न करे तो उसे बुद्धिमान कौन कहेगा ?

और फाइनेंशर थी, श्रीमती चाँद रानी, श्री केसरचन्द दलाल की तथाकथित धर्मपत्नी। वास्तव में वह अपने पति के अतिरिक्त सबकी पत्नी थी, अर्थात् वे जो उसे घर पर मिलने आते अथवा जिन्हें वह बुलाना चाहती। उसका पति उसकी इच्छा के सामने तुरन्त झुक जाता और उसे पूरा करने के साधन जुटाता। उसकी इच्छा पूरी होने पर और भी भड़क उठती, जैसे उसके अन्दर एक लावा दहक रहा था जिससे वह सबको जला देना चाहती थी। आज जीवन में उसकी ख़ाहिश को ठुकराने वाला उसे प्रथम व्यक्ति मिला था। वह हैरान थी कि क्या इस संसार में ऐसे भी व्यक्ति हो सकते हैं जो एक नारी को ठुकराना पसंद करें ? उसकी दृष्टि में अभी तक कोई ऐसा व्यक्ति उत्पन्न नहीं हुआ था। उसके सीमित संसार में दूसरे ही ढंग के लोग रहते थे। वे उसके इर्द-गिर्द चक्कर काटते, उससे बात करना और उसके सामीप्य में रहना अपना सौभाग्य समझते। और यहाँ था एक विद्रोही, जिसने उसकी इच्छा को यों ठुकरा दिया था, दूसरों के सामने उसे कुचल डाला था। वह एक भूखी शेरनी के समान आगबबूला हो रही थी। लेकिन उसकी शेरनी से तुलना करना, शेरनी का अपमान करना था। वह सीधा, सामने से कब हमला कर रही थी। वह तो मचान बाँधकर, दूसरों की सहायता से, शेर का शिकार करना चाहती थी। उसका शिकार करने के लिए उसे दो सहायक मिल गए थे। वे शेर को समाप्त करना चाहते थे। उनकी सहायता के लिए उसके पास पालतू कुत्ते भी थे, जिनसे वह हर समय काम ले सकती थी। पैसे की उसे चिन्ता न थी। वह पानी के समान पैसा बहा सकती थी, इसलिए कि पैसा उसका अपना था नहीं, दूसरों से मिलने में कोई कठिनाई न थी।

और आक्रमण का सबसे पहला कदम उसके विरुद्ध पत्रों में प्रोपेगंडा था। उन लोगों ने यह नहीं महसूस किया था कि इसका उलटा असर भी हो रहा था। उसे गालियाँ मिलने के साथ-साथ लोगों में उसी का वर्णन होने लगा। यद्यपि प्रारम्भ में लोग उसके विषय में बातें पढ़कर उससे घृणा करने लगे थे, लेकिन प्राय: वह घृणा भी उसका कुछ न बिगाड़ सकती थी। हॉकर उसका नाम पुकारकर पत्र को बेचते और 'नया संसार' धड़ाधड़ बिक जाता। उसके व्यक्तिगत चरित्र पर आक्रमण होते, लोग इन्हें मज़ा लेकर पढ़ते। बैकुण्ठ हैरान था कि केवलकृष्ण इस पत्र के खिलाफ़ मुकद्दमा क्यों नहीं चलाता? वह अपने चरित्र पर किये गए आरोपों को क्यों चुपचाप सहन करता है? उससे बढ़कर इस बात को कोई नहीं जानता था कि ये बातें शत-प्रतिशत झूठी और मनघड़ंत हैं, उनमें कोई सचाई नहीं है। लेकिन फिर भी वह खामोशी से बर्दाश्त क्यों कर रहा है? इससे तो लोगों का सन्देह विश्वास में बदल रहा होगा। और मातादीन गौहर कब चूकने वाला था? वह तुरन्त इन बातों को दुहराता और साथ ही यह भी लिखता कि अगर उनके आरोप निराधार हैं तो उनका खंडन क्यों नहीं किया जाता, उनके पत्र पर केस क्यों नहीं चलाया जाता? परन्तु शाद की ओर से इन हमलों का कोई उत्तर नहीं मिलता। ऐसा लगता कि वह उस पत्र को पढ़ता ही नहीं था। इससे चाँद रानी को और भी क्रोध आता। वह तुरन्त एक इमर्जेंसी मीटिंग बुलाती, जिसमें गौहर और गौर के अतिरिक्त शमसुद्दीन और वह स्वयं (बैकुण्ठ) होते। केसरचन्द यदि बाहर न गया होता तो सम्मिलित हो जाता। उसका होना न होने के बराबर था। उसकी कोई राय न थी, कोई सम्मति न थी। यदि वह किसी विचार को प्रकट भी करता, तो प्राय: उसे रद्द कर दिया जाता। बैकुण्ठ स्वयं अपनी ओर से कोई प्रस्ताव प्रस्तुत न करता। वह कहता कि इस मामले में वह एकदम कोरा है, राय क्या दे? परन्तु इन दोनों के बगैर भी इमर्जेंसी मीटिंग सारे मामले पर स्वयं विचार करती। नये

आरोपों के विषय में सोचा जाता। नई-नई बातें घड़ी जातीं और कुछ सप्ताह तक प्रोपेगंडा इन लाइनों पर चलता। परन्तु फिर भी कुछ अन्तर न पड़ता। पब्लिक में अवश्य चर्चा होती, नगर में उसकी बदनामी होती। पर्चा बिकता, परन्तु वह टस-से-मस न होता। न जाने वह किस हड्डी का बना था! इतनी सख्त! स्वयं बैकुण्ठ भी हैरान होता। हाँ, केवल कृष्ण की इस विशेषता ने बैकुण्ठ के दिल में उसके लिए सम्मान अवश्य पैदा कर दिया। वह है निर्भीक और निडर। वह प्रायः देखता था कि मातादीन को प्रसन्न बनाये रखने के लिए बड़े-बड़े उच्चाधिकारी उसके घर मिलने आते और उसे हर पार्टी पर आमन्त्रित करते। उच्चकोटि के नेता उससे न बिगाड़ते, उसकी खुशामद और चापलूसी करते और यहाँ एक व्यक्ति था जो उसकी किंचित् परवाह न करता था। वह पत्र की, सम्पादक और उसके सहयोगियों की सदा उपेक्षा करता। वह सचमुच वीर था। वह इन सब उच्चाधिकारियों और तथाकथित नेताओं से बहादुर था, जो केवल अपनी पोज़ीशन बनाये रखने के लिए, अपने स्वाभिमान को मिट्टी में मिलाकर, केवल उसे प्रसन्न रखने की चिन्ता में रहते थे। दूसरों की दृष्टि में ये लोग आदर्शवादी और अपने सिद्धान्तों में कितने दृढ़ थे!

व्यक्तिगत चरित्र के बाद, केवल कृष्ण के ऑफ़िस के कामों पर हमला होने लगा। उसके तथाकथित जुल्मों का बखान होता। उसके अपने अधीनों के साथ दुर्व्यवहार का वर्णन होता। उसका जनता के साथ सम्पर्क त्रुटिपूर्ण माना जाता। उस पर ये आरोप लगते कि वह घमंडी और अभिमानी है। जब इससे भी काम न चला तो यह बात फैलाई गई कि उसके पास कोई डिग्री नहीं है, वह झूठी डिग्री के सहारे काम चला रहा है। फिर दफ़्तर में खरीदी गई चीज़ों का वर्णन होता। उनके लिए टेंडर नहीं माँगा गया अथवा उसके लिए कम समय दिया गया। उन्होंने 'क' से इसलिए चीज़ें नहीं लीं क्योंकि उसने घूस देने से इन्कार कर दिया। 'ख' से टेंडर माँगे बगैर चीज़ें खरीद लीं। क्या

इससे यह प्रकट नहीं होता कि बाहर से आने वाले ये अधिकारी जनता के रुपये का किस प्रकार अपव्यय कर रहे हैं ?

"बाहर से आये हुए अधिकारियों से आपका क्या मतलब है ?" एक दिन बैकुण्ठ ने एक इमर्जेंसी मीटिंग में पूछा।

"आप इतनी मोटी बात भी नहीं समझते ?" गौरीशंकर बोले, "बाहर का मतलब दूसरे प्रान्त से।"

"लेकिन वह दूसरा प्रान्त है तो भारत में ?"

"इससे क्या होता है ?" मातादीन ने कहा।

"यही कि एक ओर तो आप अपने पत्र में भारत की एकता को संगठित करने का प्रचार करते हैं, और दूसरी ओर अन्य प्रान्तों से आये हुए लोगों को बाहर के आदमी कहते हैं।"

"मिस्टर बैकुण्ठ !" गौहर बोले, "आज आप कैसी बातें कर रहे हैं ? आप नहीं देखते कि बाहर से आये हुए इन लोगों ने सब नौकरियों पर अधिकार जमा रखा है और यहाँ के लोगों को अवसर ही नहीं दिया जाता।"

"यहाँ के लोग स्वयं अवसर का लाभ नहीं उठा सकते।"

"मतलब ?"

"मतलब यह कि बड़ी नौकरियों के लिए देश-भर के पत्रों में विज्ञप्ति दी जाती है, विशेष असामियों के लिए दरखास्तें माँगी जाती हैं और प्रत्येक योग्य व्यक्ति प्रार्थना-पत्र भेज सकता है। अब अयोग्य लोग कैसे अर्ज़ी दें ? और जो अर्ज़ी न दें, उन्हें कैसे लिया जाय ?"

"यह क्या बात हुई ?" गौहर बोले, "हमारे शहर में क्या इस जगह के लिए एक भी व्यक्ति योग्य न था जो बाहर से आये हुए इस व्यक्ति को ले लिया गया ?"

"यदि कोई था तो उसे एप्लाई करना चाहिए था। फिर बाहर से आने वाले से आपका अभिप्राय है दूसरे प्रान्त का, लेकिन मैं आपसे पूछता हूँ कि हममें से इस प्रान्त का कौन है ? आप हैं गौहर साहब ?

नहीं, गौर साहब भी नहीं। मैं अन्य प्रान्त से आया हूँ, शमसुद्दीन भी यहाँ के नहीं। हममें से अधिकांश दूसरे प्रान्तों से आये हैं।"

"लेकिन हम सबको आये हुए आठ-दस वर्ष हो गए।"

"तो इन्हें भी हो जायँगे।"

"आप कहना क्या चाहते हैं ?" गौर ने पूछा।

"मैं यह कहना चाहता हूँ कि आज के युग में किसी व्यक्ति को ऐसी बात नही कहनी चाहिए जिसका गलत असर फैलने का भय हो। हम दक्षिण अफ्रीका के शासन का क्यों विरोध कर रहे हैं—क्योंकि वह ऐसी ही गलत विचारधारा को प्रोत्साहन दे रहा है। उसके इस गलत काम के लिए हम उसके खिलाफ़ शोर मचा रहे हैं।"

"लेकिन आप इस व्यक्ति के पक्ष में क्यों शोर मचा रहे हे ?" चाँद-रानी ने पूछा।

"किस व्यक्ति के ? ओह ! आई एम सॉरी। मैं भूल ही गया था कि हम सिद्धान्त की लड़ाई नहीं लड़ रहे, बल्कि एक शत्रु को ध्वंस करने की योजना बना रहे हैं, शस्त्र चाहे कोई भी क्यो न हो।" उसने व्यंग्य करते हुए कहा।

"बिलकुल !" चाँद रानी व्यंग्य को समझे बगैर बोली, "हमारा मतलब शत्रु का नाश करना और इसके लिए हर शस्त्र को इस्तेमाल करना है।"

"आप ठीक फर्मा रही हैं," शमसुद्दीन समर्थन करते हुए कहने लगे, "मेरे ख़याल में हमले का एक और तरीका भी है।"

"क्या ?"

"उसकी शायरी पर हमला कीजिए।"

"कैसे ?"

"जिस-जिस रिसाले में उसकी कविता छपती है, उन सबको अपने अखबार की वह कटिंग भेजनी चाहिए जिसमें केवल कृष्ण पर हमले किये गए हैं।"

"खूब !" चाँद रानी हवा में उछलती हुई बोली, "यह आपने बहुत अच्छा सोचा ।"

"यह काम मैं अपने जिम्मे लेता हूँ," गौरीशंकर ने अपनी सेवा अर्पण करते हुए कहा ।

"हम दोनों," चाँद रानी ने संशोधन किया ।

"मंजूर !"

"साथ-साथ उन पत्रिकाओं के सम्पादकों को पत्र लिखे जायँ कि इनकी प्रायः कविताएँ चुराई हुई होती हैं । भला जो व्यक्ति हर प्रकार की बेईमानी के लिए मशहूर हो, एक ईमानदार शायर कैसे बन सकता है ?"

"बिलकुल ।"

"साथ ही यहाँ हमला सख्ती से किया जाय और पुरानी बातों को दुहराकर लिखा जाय । गवर्नमेंट से इस बात की माँग की जाय कि ऐसे बेईमान अफ़सर को मुअत्तल करके उस पर मुकद्दमा चलाए ।" इंस्पेक्टर महोदय ने परामर्श दिया ।

"ऐसा ही होगा," गौहर ने उत्तर दिया ।

इस निर्णय के बाद शमसुद्दीन ने कहा, "आपने एक और खबर सुनी है ?"

"क्या ?" चाँद ने पूछा ।

"परवाज़ साहब को नौकरी मिल गई है ।"

"कहाँ ?"

"कॉलेज में ।"

"तो क्या वह प्रोफेसर बन गए ?"

"जी ।"

"और उन्होंने हमें खबर ही नहीं की," चाँद बोली ।

"आज ही तो ऑर्डर मिला है । कल चार्ज सँभालेंगे ।"

"चलो एक पार्टी तो तय हुई ।"

"इस बार परवाज़ से फर्स्ट क्लास दावत लेनी होगी," गौहर ने

कहा।

"सूखी ?"

"सूखी का क्या मतलब ? ऐसी दावत तो खूब गीली होनी चाहिए।" चाँद बोली।

"दिन कौनसा सोचा आपने ?"

"कल। नेक काम में देरी क्यों की जाय ?"

"अभी जाकर परवाज़ से मिलता हूँ," इन्स्पेक्टर साहब बोले।

और अगले दिन खूब शानदार पार्टी हुई थी।

बैकुण्ठ ने देखा कि दरवाजा खुला। चाँद रानी के अतिरिक्त और कौन हो सकता है ? वह उसकी ज़िन्दगी पर किस तरह छा गई थी ! उसकी ज़िन्दगी अब अपनी थी ही कहाँ ? वह तो दूसरों के इशारे पर नाच रहा था। उसकी आत्मा मोटी-मोटी तहों के नीचे छिप गई थी, जहाँ से उसके अस्तित्व का पता ही न चलता था। उसे यह सन्देह होने लगा था कि उसकी आत्मा है ही नहीं, वह मर चुकी है। जीवित शरीर में मृत आत्मा शरीर को भी मृतप्राय बना देती है, और इसीलिए शरीर पर उसका स्पर्श अनुभव करके वह चुप रहता। उसकी विरोध करने की शक्ति समाप्त हो चुकी थी, संघर्ष करने की हिम्मत विदा हो चुकी थी। दरवाजा फिर बन्द हुआ। अन्धकार में कोई उसकी ओर बढ़ा आ रहा था। उसने चाहा, ज़ोर से चीख़ लगा दे, सारी शक्ति से चिल्ला उठे, जैसे कोई स्त्री अपने कमरे में किसी अन्य पुरुष को आते हुए देखकर चिल्ला उठती है। उसने कोशिश की। लेकिन जैसे भयानक स्वप्न आने पर कोई चिल्लाने का प्रयत्न करे और चिल्ला न सके, यही दशा उसकी थी। फिर उसकी आत्मा भी तो गुम थी—गुम नहीं, दबी हुई, मोटी-मोटी तहों के नीचे। और उसने महसूस किया कि कोई चीज़ उसे दबाये जा रही है, विरोध करने की शक्ति विदा हो चुकी है। उसने खामोशी से अपनी हार स्वीकार कर ली।

एक दिन प्रोफेसर परवाज आये तो चाँद रानी उनसे बेरुखी से पेश आई।

"बात क्या है ?" वह बोले ।

"अपने दिल से पूछो।"

"वह तो आपके पास है।"

"झूठ की भी कोई हद होती है।"

"कौन पाजी झूठ बोल रहा है ?"

"आप !"

"तौबा-तौबा ! आप तो बहुत ही सख्त हैं। कम-से-कम इस बात का तो ध्यान रखिए कि मैं सामने बैठा हूँ।"

"आपके सामने बैठने और न बैठने में कोई अन्तर नहीं, प्रोफेसर !"

"क्यों ?"

"आप लोग भीरु होते हैं।"

"आपने फिर मेरा अपमान किया।"

"मान-अपमान को तो मैं नहीं जानती, हाँ, आपके स्वभाव को खूब जानती हूँ। मुझसे भेंट से पूर्व आप शाद के पास जाया करते थे। दिन-रात वहीं पड़े रहते थे। न जाने ऐसी कौनसी बातें थीं जो खत्म ही न होती थीं। पड़ोसी और मुहल्ले वाले आपसे तंग आ गए। जब आप मुहल्ले में आते, लोग अपने दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द कर लेते ताकि आपकी नजर से उनकी बहू-बेटियाँ बच सकें। लोगों ने उसके पति से शिकायत की। वे पत्नी को तो न समझा सके और न उसके डर से

आपको रोक सके, लेकिन उन्होंने अपना दूर का तबादला करा लिया। तदनन्तर आप गुलनार के मित्र बने। वहाँ भी आपकी खूब बदनामी हुई। उसके बाद मैंने आप पर दया की। क्षमा कीजिएगा, परवाज़ साहब ! मैं आपके सौन्दर्य से इतनी प्रभावित नहीं हुई थी जितनी आपकी यतीमों जैसी शक्ल पर मुझे तरस आया था। आप तो यह जानते हैं कि इस आस्ताने पर बड़ों-बड़ों के सिर झुकते हैं और उन्हें इसका कितना मूल्य देना होता है। लेकिन आपके साथ मैंने कितनी रिआयत बरती है। आप दिन-रात, समय-असमय, जब चाहें आ सकते हैं और इसके लिए आपको कुछ फीस नहीं देनी पड़ती। अब तक आपने मुझे केवल 'दीपशिखा' उपहार के रूप में दी थी और आप खूब जानते हैं कि वह एक प्रकाशक ने आपको मुफ्त भेंट की थी। आपके विषय में मैं आपसे अधिक जानती हूँ। आपकी सब बातों के बारे में मुझे पता चलता रहता है।"

"उदाहरणत: ?"

"उदाहरणत: कि आप छुट्टियों में कलकत्ता में एक लड़की के चंगुल में फँस गए।"

"इस पर तो क्रोध करने के बजाय आपको मुझ पर दया करनी चाहिए।"

"जब आपको स्वयं अपने ऊपर दया नहीं आती, तो दूसरों से क्यों आशा रखते हैं ?"

"मैं आपको दूसरा नहीं समझता।"

"लेकिन मैं समझती हूँ," वह गुस्सा दिखाती हुई बोली।

"इतनी नाराज़ी क्यों ?"

"आप एक समय दो तालाबों का पानी नहीं पी सकते।"

"यह तो प्यास पर निर्भर है।"

"नहीं नीयत पर। और मैं जानती हूँ, आपकी नीयत दिन-पर-दिन बिगड़ती जा रही है। मुझे पता चलता रहता है कि आप लड़कियों के पीछे भागते फिरते हैं, उन्हें अपने घर बुलाते हैं, उनके घर मुफ्त ट्यूशन

पढ़ाने जाते हैं, उनके सामने झूठी डींगें मारते हैं।"

"क्या ?"

"कि आपने हिंदी का पेपर सेट किया है, आपके मित्र ने अंग्रेज़ी का। आपके एक सम्बन्धी भूगोल के पर्चे की जाँच कर रहे हैं। आप लड़कियों को पास कराने का वादा करके उनसे फीस वसूल करते हैं।"

"आपसे किसने कहा ?" वह क्रुद्ध होकर बोला।

"मुझे आँखें दिखाने से काम नहीं चलेगा, परवाज़ जी !"

"आपने आजकल शायद किसी दूसरे प्रोफेसर से दोस्ती गाँठी है ?"

"दोस्ती गाँठे बग़ैर भी बातें मालूम की जा सकती हैं।"

"यदि आप इन बातों से अवगत थीं तो आपने मुझसे पहले क्यों नहीं कहा ?"

"इसलिए कि शायद आप इसके बिना ही सुमार्ग पर आ जायँ।"

"ओह !"

"लेकिन मैं आपसे कहे देती हूँ कि पानी सिर से गुज़र चुका है और सहन-शक्ति अपनी पराकाष्ठा पर जा पहुँची है। यदि आप मुझसे मित्रता बनाये रखना चाहते हैं, तो आपको दूसरे मार्ग तजने होंगे।"

"आखिर इतना जुल्म क्यों ?" वह गिड़गिड़ाकर बोला।

"तो आपका मतलब है कि सब ज़ुल्म मैं ही बर्दाश्त करूँ ?"

"मुझमें सहन-शक्ति है ही कहाँ ?"

"मुझमें है ?"

"आपकी तो बात ही और है। बहुत कम स्त्रियों की आपके सौंदर्य और बुद्धि से तुलना की जा सकती है। आप······"

"आप आ गए अपनी असलियत पर !"

"बिलकुल असलियत पर," वह फौरन बोला, "मैंने सचमुच बहुत स्त्रियों को देखा है, उनके स्वभाव का अध्ययन किया है, उनकी प्रकृति को परखा है। लेकिन मैं सच कहता हूँ, उनमें वह बात है कहाँ जो आप में है !"

"आप खुशामद पर उतर आए।"

"सच्ची खुशामद कोई बुरी चीज़ नहीं," परवाज़ बोले, "आपकी एक और विशेषता यह है कि इस घर में ईर्ष्या नाम की कोई चीज़ नहीं।"

"आप ग़लत समझ बैठे प्रोफेसर!"

"मेरा मतलब, आपसे मिलने वालों में पारस्परिक प्रतिस्पर्धा नाम-मात्र को नहीं।"

"अब आये आप ठीक मार्ग पर।"

"शुक्र है भगवान् का, हमारी कोई बात तो ठीक हुई। मैं तो समझ बैठा था कि आज बाजी मात ही रहेगी।"

"खैर! यदि आपको अपने ऊपर तरस नही आता, मुझे तो आप पर दया करनी होगी। निर्बल पर अनुकम्पा करना मैं अपना कर्तव्य समझती हूँ।"

"यदि यह गाली है, तो आपकी गाली खाना मैं अपना धर्म समझता हूँ।"

"आप बड़े वह हैं," वह गर्दन को बल देती हुई बोली।

"लेकिन हूँ आपका दास ही," परवाज़ उसका हाथ सहलाते हुए कहने लगे, "बड़ी मुश्किल से समझौता हुआ। बड़ा मज़ा उस मिलाप में है जो सुलह हो जाय जंग होकर। मैं तो समझ बैठा था कि दुश्मनों ने कानों में इतना विष भर दिया है जो निकाला जा ही नहीं सकता।"

"तो विष के निकल जाने की खुशी में मिठाई खाओगे न?"

"नेकी और पूछ-पूछ। आपकी यही बातें मार डालती हैं। लड़ाई भी कर ली, अब जी भरकर प्यार भी होगा।"

"लेकिन पिक्चर······"

"मैं पहले ही सीटें बुक करा आया हूँ।"

"कितनी?"

"दो, और कितनी?"

"लेकिन आपके साथ सिनेमा एक शर्त पर जा सकती हूँ।"

"शर्त्त वहाँ जाकर लगायेंगे।"

"वहाँ शर्त्त का अवसर ही नहीं मिलेगा," वह मुस्कराकर बोली।

"यहाँ है ?"

"इसीलिए लगा रही हूँ। वह यह कि आपको केवल कृष्ण के विरुद्ध कुछ करना होगा।"

"उस मर्दूद का नाम कहाँ ले दिया ?" प्रोफेसर साहब सिर हिलाकर बोले, "बड़ी मुश्किल से अच्छे मूड में आए थे और आपने उसका नाम लेकर कटुता पैदा कर दी।"

"मैं कटुता को सदा के लिए समाप्त कर देना चाहती हूँ।"

"सदा के लिए ? वह कैसे ?"

"वह बाद में बतलाऊँगी। परन्तु आप उसके खिलाफ़ प्रोपेगण्डा शुरू कर दीजिए।"

"कहो तो कल उसके विरुद्ध सब क्लासों में प्रचार शुरू कर दूँ ?"

"मैं व्यंग्य नहीं कर रही।"

"मैं गम्भीरतापूर्वक कह रहा हूँ। इससे यह लाभ होगा कि उसके खिलाफ़ नगर-भर में विष फैल जायगा।"

"और साथ ही आपके खिलाफ़ भी।"

"मैं बहुत सावधानी से काम करूँगा। लड़कों को शासन-सम्बन्धी दूसरी बातें बतलाते हुए पुलिस पर आक्रमण करूँगा और बाहर से आने वाले लोगों के विरुद्ध ज़हर उगलकर, बात केवल कृष्ण पर लाकर खत्म कर दूँगा।"

"नाम लेकर ?"

"इतना मूर्ख नहीं।"

"यह तो आपको सिद्ध करना होगा।"

"परन्तु सिनेमा तो अभी चलेंगी न ?"

"और क्या दिन को चलूँगी ?" वह मुस्कराकर बोली।

रात के खाने पर गौरीशंकर, देवकीप्रसाद और उनके तिलकधारी

असिस्टेंट गोवर्धनप्रसाद आमन्त्रित थे। बात का विषय केवल कृष्ण था। गौरीशंकर खाने की मेज़ पर बैठते हुए बोले, "चाँदजी! हमारे शहर में अगर कोई समझदार और सूझ-बूझ के आदमी हैं तो देवकी-प्रसाद जी हैं।"

"साहब! इसमें तो रत्ती-भर शक नहीं," गोवर्धनप्रसाद समर्थन करते हुए कहने लगे, "हमारा दोनों का चोली-दामन का साथ रहा है, या यों कहिए मैंने आज तक आपका दामन नहीं छोड़ा है। और इससे मुझे जो लाभ हुआ है, उसे मैं वर्णन ही नहीं कर सकता। अपने भतीजे को तो मैंने आपका शिष्य बना दिया है।"

"कौन भतीजा?" गौरीशंकर ने पूछा।

"आप नहीं जानते? कांता प्रसाद।"

"वह आपका भतीजा है!" गौरीशंकर कुर्सी से जैसे उछल पड़े, "वह तो बड़ों-बड़ों के कान कुतरता है। बहुत तेज़ है। दुश्मनों का नाक में दम कर देता है। स्वयं ही उनके खिलाफ़ अर्ज़ियाँ टाइप करके अफ़सरों को भेज देता है।"

"साहब! यह सब आप ही की कृपा का फल है।" गोवर्धनप्रसाद डी० पी० (देवकी प्रसाद) की ओर संकेत करके बोले।

"अरे साहब! नहीं," डी० पी० दोनों हाथ जोड़कर कहने लगे। उन्होंने जेब से नसवार की डिबिया निकाली और चुटकी भरकर, नाक में डालकर, उसे फिर जेब में रख लिया। फिर गौरीशंकर की ओर देख और दोनों हाथ जोड़कर बोले, "यह सब साहब की कृपा है। हम तो एक बात जानते हैं कि अपने अफसर को भगवान् तुल्य मानना चाहिए।

"और अधीन को शैतान तुल्य," गौरीशंकर हँसकर बोले।

डी० पी० और जी० पी० दोनों लज्जित हो गए। चाँद रानी तुरन्त उनकी सहायता पर उतरती हुई बोली, "आप तो बहुत कम खा रहे हैं।"

"बुड्ढा हूँ, धीरे-धीरे खाता हूँ, लेकिन कम नहीं खाऊँगा।"

डी० पी० हँसकर बोले।

"और मेरा तो सुबह व्रत था, इसलिए कम खाने का प्रश्न ही नहीं उठता।" जी० पी० कहने लगे।

"साहब ! जब शर्म उतारकर रख ली, तो ऐसी बात ही क्यों ?" गौरीशंकर मुस्कराकर बोले।

दोनों बुड्ढे लम्बे-लम्बे हाथ मारने लगे। खाना भी तो खूब स्वादिष्ट था।

खाने के बाद सब बैठक में आ गए। पान मुँह में रखते हुए गौरीशंकर बोले, "चाँद जी ! आप श्री देवकीप्रसाद जी से फीस दिये बिना परामर्श ले सकती हैं और इनके विशाल अनुभव से लाभ उठा सकती हैं।"

"यह तो आपके गाम्भीर्य ही से प्रकट हो रहा है," चाँद ने कहा।

"अरे साहब ! यह सब आपकी कृपा है," डी० पी० ने जेब से डिबिया निकाल, एक चुटकी नाक में डालते हुए कहा।

"बात यह है कि मुझे बाहर से आये हुए लोगों से बहुत घृणा है," चाँद रानी बोली, "मैं तो यह पूछती हूँ कि क्या इन लोगों को कोई दूसरा शहर अच्छा ही नहीं लगा जो यहाँ चले आये, जैसे दादा की जागीर हो, बाहर से आने वाले लोगों में कुछ तो सज्जन और भद्र पुरुष हैं। गौरीशंकर ही को ले लीजिए। अब इनका आना हमें नहीं अखरता।"

"साहब ! हम तो अपना अहोभाग्य समझते हैं कि आप जैसे सज्जन यहाँ आ गए हैं।" डी० पी० बोले।

"आपने बिलकुल ठीक कहा," जी० पी० ने उनका समर्थन किया।

"लेकिन अब यहाँ कुछ ऐसे लोग भी आ गए हैं जो यहाँ के वातावरण के लिए बहुत हानिकारक हैं," चाँद रानी ने कहा।

"दूर क्यों जायँ ?" गौरीशंकर बोले, "आप हमारे मित्र केवल कृष्ण ही को लीजिए।"

"यदि वह मित्र है तो शत्रु कैसा होता है ?" चाँद ने पूछा, "बड़ा खराब और खतरनाक आदमी है ।"

"सुना डी० पी० साहब !" गौरीशंकर बोले, "अब ज़रा उनके करेक्टर के बारे में भी आपसे सुनिए ।"

"करेक्टर ! चाँद रानी नाक सिकोड़कर बोली, "मै तो हैरान हूँ कि ऐसे चरित्रहीन को सर्विस में रखा क्यो गया है ? दिन-प्रतिदिन उसके किस्से सुनती हूँ तो कानों में उँगलिया दे लेती हूँ । लेकिन शासन उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही क्यों नही करता ?"

"अब शासन किस-किसके विरुद्ध कार्यवाही करे ?" गौरीशंकर आह खींचकर बोले ।

"क्यों साहब ! यदि कोई ऐसी बात है तो कार्यवाही अवश्य होनी चाहिए ।" देवकीप्रसाद ने प्रस्तावित किया ।

"बात ! यह पूछिए, क्या बात नहीं है ?" चाँद बोली, "घूस वह लेते हैं । जुआ वह खेलते हैं । बाजारू औरतों के पास वह जाते हैं । यही नहीं, लोगों को सताते है । गरीबो पर जुल्म ढाते है । इस पर नाम कमाने की धुन में रहते है । लोगों से कविताएँ लिखवाकर पत्रों और पत्रिकाओं में भेजते हैं । सुन्दर बनने के लिए सिर के बीच में माँग निकालते हैं, बिलकुल औरतों की तरह । क्या ये शरीफो के लच्छन है ?"

"बिलकुल नही," डी० पी० ने सिर हिलाकर कहा ।

"साहब ! इसका तो कुछ इलाज होना चाहिए ।" जी० पी० ने अनुमोदन किया ।

"हमारे नगर में औरतों की तरह किसीने माँग नहीं निकाली थी । क्यों जी० पी० साहब ?" देवकीप्रसाद ने उँगली ऊपर उठाते हुए पूछा ।

"साहब ! कभी नहीं ।" उन्होंने सिर हिलाते हुए उत्तर दिया ।

"एक आदमी ने निकाली थी और लोगों ने उसे कभी क्षमा नहीं किया ।"

"साहब ! उसके खिलाफ़ तो शहर वालों को गुस्सा था।"

जी० पी० बोले।

"तो लोग इसके बारे में चुप क्यों हैं ?" चाँद रानी ने पूछा।

"लोगों को अभी तक इसका पता नहीं चला," डी० पी० ने उत्तर दिया।

"यही मेरा विचार है," उनके असिस्टेंट ने ताईद की।

"यह किसका दोष है ?" गौरीशंकर ने पूछा।

"निस्सन्देह इन लोगों का," डी० पी० ने मेज़ पर मुक्का मारते हुए कहा, "उन्हें ऐसी बात का पता लेना चाहिए था और पता लेकर खामोश नहीं रहना चाहिए था।"

"लेकिन हम अब खामोश नहीं रहेंगे।" गोवर्धनप्रसाद ने अपने बाएँ हाथ की हथेली पर दाएँ हाथ का मुक्का मारते हुए कहा।

"तो क्या करोगे ?" गौरीशंकर ने पूछा।

"कुछ अवश्य करना चाहिए," गोवर्धनप्रसाद ने कहा।

"उनके खिलाफ़ केस बनाना चाहिए," देवकीप्रसाद ने परामर्श दिया।

"यही मेरा विचार था," जी० पी० ने अनुमोदन किया।

"परन्तु क्या केस ?" चाँद ने पूछा।

"यह काम आप मुझ पर छोड़ दीजिए," सुपरिण्टेण्डेण्ट छाती को हाथ से थपकते हुए बोले, "यह काम कान्ता प्रसाद के सुपुर्द होगा और वह बिना किसी आपत्ति के उसे पूरा कर देगा। उस पर विभागीय केस चलाया जायगा और उसीमें उसका शिकंजा कस दिया जायगा।"

"यह ठीक है," चाँद बोली।

"तो अब हमें आज्ञा दीजिए।"

"फिर कब भेंट होगी ?"

"जब आप कहें।"

"कल मैं और आप दोनों दूसरा शो देखने चलेंगे।"

"सच !" बुड्ढे के सूखे चेहरे पर मुस्कान नाचने लगी, "तो अब

चलते हैं, नमस्ते।"

"नमस्ते।"

डी० पी० अपना डण्डा सँभाल, नसवार की चुटकी नाक में डाल, शेरवानी को झाड़कर दरवाजे से बाहर निकले और उनके आज्ञाकारी असिस्टेंट लम्बे कोट को सँवारते हुए, उनसे दो क़दम पीछे-पीछे चलने लगे।

"धूर्त कहीं के!" गौरीशंकर ने धीरे से कहा।

कुछ दिनों के बाद जब दोनों फिर उनके घर आये तो चाँद ने पूछा, "क्यों, कुछ सफलता मिली?"

"मैंने उसकी नाकाबन्दी शुरू कर दी है," डी० पी० ने कहा।

"किस तरह?"

"अपनी पोज़ीशन से अनुचित लाभ उठाते हुए ऑफ़िस के चपरासियों से घर का काम लेते थे। मैंने उन सबका उसके घर जाना बन्द कर दिया। दफ्तर का माली उसके घर फूल लेकर जाता था, मैंने उसे भी बन्द कर दिया।"

"ये बहुत छोटी बातें हैं," शमसुद्दीन बोले।

"लेकिन इनका परिणाम बहुत बड़ा है," जी० पी० ने उत्तर दिया।

"केस का क्या हुआ?"

"सब ठीक हो गया है। कान्ताप्रसाद को यह काम सौंप दिया गया है, उन्होंने गाड़ी चला दी।"

"कैसे?"

"इसमें कुछ मुश्किल ही न था। उसने स्वयं ही ऑफ़िस में टाइप करके एक अर्ज़ी सेक्रेट्री को दे दी, जिसमें उन पर बहुत से दोष लगाए थे।"

"उदाहरणतः ?"

"उदाहरणतः कि वह लोगों के तबादले के समय घूस लेते हैं, कार में सरकारी पैट्रोल इस्तेमाल करते है।"

"यह ठोस केस नहीं।"

"लेकिन मामला यहीं तो ख़त्म नहीं हो जाता। कान्ता प्रसाद ने एक फ़र्म से यह दर्खास्त दिलवा दी—चूँकि उन्होंने केवल कृष्ण को घूस देने से इनकार कर दिया था, इस पर उन्होंने उनकी फ़र्म का टेंडर स्वीकार नहीं किया, यद्यपि वह सबसे कम था।"

"इसका प्रमाण ?"

"प्रमाण होता नहीं, बनाया जाता है। आख़िर, फ़र्मों वाले हमारी नहीं तो और किसकी बात मानेंगे ?"

"लेकिन जो टेण्डर रजिस्टर में दर्ज हो चुके हैं, उन्हें कैसे बदला जा सकता है ?"

"इसमें मुश्किल ही क्या है ? फ़ाइलें तो हमारे पास हैं न ! हमने उस फ़र्म का पुराना टेण्डर निकाल दिया, उसकी जगह नया रख दिया।"

"क्या नाम है फ़र्म का ?"

"मल्लूराम कल्लूराम।"

"क्या उसने भी फ़र्म खोल रखी है ?" केसरचन्द ने पूछा।

"खोली नहीं, खुलवाई गई है।" डी० पी० ने नसवार लेते हुए कहा, "क्यों, क्या बात है ?"

"उस बेचारे की साख ही क्या ? कहते हैं, उसकी माँ डोमनी थी और बाप तेली। और बेटे ने फ़र्म खोल ली।"

"इससे क्या होता है ?" जी० पी० बोले, "वैसे तो वह चोरी के दोष में छः माह की जेल भी काट आया है और भूखा मरने पर सिनेमा के बाहर मूँगफली बेचता रहा। लेकिन हमने कह-सुनकर उसको दफ्तरों में उगालदान और कमोड सप्लाई करने का ठेका दिलवा दिया था। उसे कुछ पैसे बच गए। हमारा कृतज्ञ हो गया। अब हम उसे किसी

की भी पगड़ी उछालने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं।"

"मगर ऐसे आदमी से बचकर रहना चाहिए, सुपरिण्टेण्डेंट साहब !" चाँद रानी उन्हें सावधान करती हुई बोली, "ऐसे आदमी का क्या विश्वास ? किसी दिन आपकी टोपी ही न उछाल दे।"

"राम ! राम ! राम !" तिलकधारी असिस्टेंट अपनी टोपी को सँभालते हुए बोले, "हमारा तो वह कृतज्ञ है।"

"बस, ज़रा सावधान रहना। हाँ, तो फिर दर्ख़ास्त का क्या बना ?"

"दरअसल वह अर्ज़ी कान्ताप्रसाद ने स्वयं ही दफ्तर में टाइप करके सेक्रेटरी को दे दी। वह उसे ऊपर भेज देंगे और केवल कृष्ण के विरुद्ध इनक्वायरी............"

"इनक्वायरी !" चाँद रानी खुशी से उछलती हुई बोली। "खूब ! बहुत खूब ! जॉर्ज ! मिठाई लाओ।" वह हर्ष-बाहुल्य से चिल्लाकर बोली।

"लेकिन अब तो गुंजाइश नहीं," तिलकधारी बोले।

"यह मिठाई गुंजाइश नहीं, खुशी से खाई जायगी।"

जॉर्ज मिठाई लाया और चाँद उसे बाँटती हुई कहने लगी, "कान्ताप्रसाद ने सचमुच अपने चचा को भी मात दे दी।"

"लेकिन, मेम साहब !" डी० पी० फर्माने लगे, "गोवर्धनप्रसाद ने उन्हें बचपन ही से यह ट्रेनिंग दी। आजकल आदमी अगर ज़मानासाज़ नहीं तो कुछ भी नहीं।"

"तो इन्क्वायरी कब शुरू हो रही है ?"

"हो गई है। केवल कृष्ण पर चार्जशीट लगा दी गई है।"

"क्या ?"

"यही कि आपने कम रेट वाले टेण्डर को स्वीकार करके यह सिद्ध कर दिया है कि आपने घूंस ली है। इसलिए क्यों न आपको नौकरी से निकाल दिया जाय ?"

"नौकरी से ?" चाँद रानी खुशी से दोनों हाथों और दाँतों को

भींचती हुई बोली, "आप सचमुच कितने समझदार हैं, सुपरिण्टेण्डेंट साहब !"

"यह सब साहब की कृपा है, मेम साहब !"

"अब तो आप प्रसन्न हैं न ?" गौरीशंकर ने पूछा।

"मैं आपकी बहुत आभारी हूँ कि आपने इन सज्जनों से मेरी भेंट करा दी," चाँद ने उत्तर दिया, "आपने बाहर से आकर इन हीरों की खोज निकाल ली और हम यहीं के होते हुए भी इन्हें जान नहीं सके थे।"

"यह सब साहब की बदौलत है। आप हमारे माई-बाप हैं," देवकी प्रसाद दोनों हाथ जोड़कर, गौरीशंकर के पाँव छूते हुए बोले।

"और हमारे भी," तिलकधारी जी० पी० भी हाथ जोड़कर बोले। उनके मुँह की कई शक्लें बन रही थीं—कभी मुस्करा देते, कभी गम्भीर हो जाते। प्रतिक्षण उनकी आकृति में परिवर्तन आ जाता, जैसे वर्षा ऋतु के बादल पल-पल में कई शक्लें बदलते हैं।

"मेम साहब ! हमें आज्ञा दीजिए। हमें सेक्रेटरी साहब को सलाम करना है।"

"अवश्य।"

और दोनों नमस्ते कहकर विदा हुए।

"देखा, कैसा घाघ पकड़कर लाया हूँ ?" उनके चले जाने के बाद गौरीशंकर ने चाँद से कहा।

"लेकिन है काम का आदमी !"

"हमसे भी तो बहुत काम लेता है।"

"क्या ?"

"गन्दे-से-गन्दे काम करता है और हमें उन्हें छिपाना होता है।"

"कैसे गन्दे काम ?"

"यह मत पूछिए। कौनसे अवगुणों से वे बचे हैं ? पहले मदिरा पीते थे, अब अफीम खाते हैं।"

"अफ़ीम ?"

"बहुत। तिलकधारी महाराज के साथ सस्ती औरतों के पास जाते हैं। दोनों के न तो पत्नी है, न सन्तान। कोई रुकावट नहीं। उस पर खूब घूस लेते हैं।"

"उन्हें घूस की ज़रूरत ही क्या पड़ती है ?"

"इन कामों को करने के लिए। कोई एसी फ़र्म नही जो उन्हें बाकायदा पैसे नही देती अथवा चीजें सप्लाई नहीं करती। फिर दफ्तर में कोई मौक़ा खाली नही जाता, जब ये लोग पैसा न बनायें।"

"किस तरह ?"

"अब पिछले दिनों गणतन्त्र दिवस के उपलक्ष में हमारे विभाग की ओर से स्कूलों के बच्चों में मिठाई बाँटने का निश्चय किया गया। डी० पी० को इस काम के लिए छः सौ रुपया सौंपा गया। उन्होंने उसमें से बारह सेर घी बचाया, शक्कर और बेसन अलहदा। विभाग की ओर से कई समारोह होते हैं। उसमें से काफ़ी बचाकर खा-पी लेते हैं।"

"पता नहीं चलता ?"

"क्यों नहीं ? जब लड्डुओं के बारे में पता चला तो सोचा कि शिकंजा कस दूँ। डी० पी० भागा-भागा आया, उसने टोपी उतारकर मेरे पाँव पर रख दी और झट फ़र्श पर बैठकर मेरे दोनों पाँवों को चूमने लगा। कभी-कभी तो उससे बहुत घृणा होने लग जाती है। लेकिन केवल कृष्ण के विरुद्ध इस्तेमाल करने के विचार से विवश खामोश रहना होता है।"

"डार्लिंग ! मैं ज़रा शहर हो आऊँ। एक आदमी से बीमे के पैसे लेने हैं।" केसरचन्द ने चाँद से पूछा।

"तो इतनी देर क्यों लगा दी ? जाइए न।"

कुछ देर बाद बोली, "कौन ? जॉर्ज ? पान लाए हो ? चले आओ। यहाँ रख दो। देखो, अब यहाँ कोई न आएगा।"

"अब मैं चलूँ ?" आध घण्टे तक एकान्त में इधर-उधर की बातें करने के बाद गौरीशंकर ने कहा।

"चले जाइएगा, जल्दी काहे की है ?" चाँद बोली।

"जो आज्ञा।"

"अच्छा डार्लिंग ! अब यदि तुम्हारे दफ्तर में लंच या डिनर हो, लड्डू या मिठाई बनवाने का काम हो तो मुझे बतलाना होगा।"

"आपके पास हलवाई है ?"

"नहीं, हम ठेका देकर बनवा लेंगे।"

"हाँ-हाँ, कोई हर्ज नहीं। अभी हमने एक थाने की ग्राऊंड में एक कुआँ खुदवाया है। उसके उद्घाटन के समय एक लंच दिया जायगा।"

"कितने आदमियों का ?"

"तीनसौ का।"

"कितना खर्च होगा ?"

"पाँचसौ।"

"हम प्रबन्ध कर लेंगे।"

"लेकिन डी० पी० नाराज़ न हो जाय। इन कामों में उसकी अच्छी-खासी आमदनी होती है।"

"इसकी चिन्ता न कीजिए। उसका हिस्सा उसे मिल जायगा।"

"आप कितनी समझदार और उदार हैं !"

"अन्धों को सब अच्छे लगते हे," वह उसके हाथ को अपने गालों पर फेरती हुई बोली।

"अगर आप अच्छी न होतीं तो हम जैसों को यहाँ घुसने ही कौन देता ?"

"अकेली मैं ?"

"मेरा मतलब आपके पति भी। वह तो कितने अच्छे स्वभाव के हैं और कितने उदार हृदय ! मैंने आज तक कोई ऐसा पति नहीं देखा।"

"न ही देख सकेंगे," वह मुस्कराकर बोली, "आरम्भ ही से उन्होंने यह कह दिया था कि मेरे मार्ग में बाधा नहीं डालेंगे।"

"और आपने भी उन्हें यह आजादी दे दी ?"

"उन्हें इसकी जरूरत ही नहीं।" और दोनों ठहाका मारकर हँस दिए।

"लेकिन मुझे आपसे एक सख्त शिकायत है।"

"स्त्रियों की शिकायत नर्म होनी चाहिए।"

"आप उसे टालने की कोशिश न कीजिए।"

"क्या ?"

"कि आप रोज़ क्यों नहीं आते ?"

"कद्र खो देता है हर रोज़ का आना-जाना।"

"लेकिन यहाँ मामला उलटा है। क़द्र बढ़ती है रोज़ के आने-जाने से।"

"जो आज्ञा।" फिर अचानक कहने लगा, "लेकिन यह क्या ? आपके दोनों हाथ खाली, गहने के बग़ैर ?"

"अरे साहब ! सर्राफ़ों ही से तो दोस्ती नहीं।"

"नहीं, यह गलत है, एकदम गलत। जेवर के बिना स्त्री, स्त्री ही नहीं। आपने मुझसे पहले क्यों नहीं कहा ?"

"सच्चा प्रेम बेज़बान होता है।"

"लेकिन बग़ैर गहनों का हाथ सजता भी तो नहीं।" उसने अपनी जेब से सोने की चार चूड़ियाँ निकालकर उसके हाथों में पहनाते हुए कहा।

"आप कितने बड़े आदमी हैं !" चाँद रानी आँखों में आँसू भरकर बोली, "आप पहले ही सर्राफ़ से चूड़ियाँ ले आए थे।"

"अरे आँसू क्यों ?" वह अपनी जेब से रूमाल निकालकर, उसकी आँखें पोंछते हुए बोला, "दरअसल मैं कई दिन से देख रहा था कि आपके बाज़ू सूने-सूने लग रहे हैं और आज आते हुए सर्राफ की दुकान से उठा ही लाया।"

"मैं आपका किस मुँह से धन्यवाद करूँ !"

"इस मुँह से बढ़कर और कौनसा सुन्दर मुँह हो सकता है ! परन्तु

धन्यवाद की आवश्यकता ही क्या ?"

"तो किस चीज़ की आवश्यकता है ?"

"आपके प्रेम की।"

"उसके तो आपको जाम मिलेंगे।"

"जाम ! बहुत खूब ! प्रेम का जाम तो पी भी चुके, अब ह्विस्की का जाम लाओ।"

"अभी ?"

उसने अलमारी में पड़ी बोतल में से ह्विस्की निकालकर एक पेग में उंडेली, सोडे की बोतल खोलकर उसमें से सोडा मिलाया और उसके हाथ में पेग देकर बोली, "लो, थकान उतार लो।"

"थकान अकेले नहीं उतरती। आप भी लीजिए।"

"यदि आपकी मर्ज़ी है तो ज़रूर लूँगी।" और उसने अपने लिए दूसरे पेग में उंडेल ली।

"आपके प्रेम की याद में," गौरीशंकर अपने जाम को उसके जाम से मिलाते हुए बोला और उसे होंठों से लगाकर एक घूँट भर लिया।

चाँद अपने प्याले को ऊपर उठाती हुई बोली, "शत्रु को तबाह करने की पक्की सौगन्ध !"

पी चुकने के बाद गौरीशंकर ने विदा ली।

"यह सब क्या बकवास है?" बैकुण्ठ के मन से कई बार आवाज़ उठती। इस धीमी और क्षीण आवाज़ को वह दबाने की कोशिश करता, लेकिन इससे वह और भी उभरती। इस अजीब-से नाटक को देखकर उसका जी ऊब रहा था। वह स्वयं उसमें एक ऐक्टर था। क्या वह एक नीच काम नहीं कर रहा था? जब उसकी आत्मा उसे फटकारती, वह उसकी ओर ध्यान ही न देता। मोटी-मोटी तहों के नीचे दबी हुई उसकी आत्मा कभी-कभी अपनी धीमी-सी आवाज़ निकालती। वह महसूस करने लगा कि उसकी नौका नदी के बहाव के साथ बही जा रही है। वायु के मन्द झोंके कितने सुहावने मालूम दे रहे हैं! लेकिन उन्होंने उसे एकदम सुस्त बना दिया है। चप्पू चलाने और नौका को धारा के विरुद्ध खेने की उसमें बिलकुल क्षमता नहीं। मगर यदि नैया इसी प्रकार चलती रही तो? क्या यह ज़रूरी है, यात्रा ऐसी ही आनन्दमयी रहेगी? क्या मार्ग में भयानक चट्टानों का डर नहीं हो सकता? यदि लहरों ने नैया को अपनी लपेट में ले लिया तो? और यदि उसने चप्पू चलाने की प्रेक्टिस छोड़ दी तो क्या वह नैया को चलाना भूल तो न जायगा?

अब, जब वह चाँद रानी और उसके साथियों के साथ बैठता तो प्रायः खामोश रहता। अधिकतर उनकी हाँ-में-हाँ न मिलाता। वह उन सबकी बातें सुनकर यह महसूस करता कि ये सब बच्चे हैं। इनकी बातों को संजीदगी से लेना भी तो बचकाना हरकत थी। उसकी दृष्टि

में ये सब आयु में बड़े बच्चे थे। वैसी ही उनकी बातें, वैसी ही हरकतें। परन्तु वह केवल कृष्ण की प्रतिक्रिया से बहुत प्रभावित था। इनके हमलों का जैसे उस पर कोई असर ही नहीं हो रहा था। उसकी ओर से उत्तर में कुछ न होता। वह बच्चा नहीं था—न आयु में, न कामों से। पत्रों में उसके विरुद्ध छपने से उस पर कोई असर न होता था। ऐसा लगता जैसे ये आक्रमण उसे और भी सबल बना रहे थे, जैसे टॉनिक का काम कर रहे थे।

टानिक का काम—वह हँस दिया।

और शमसुद्दीन की बातें सुनकर प्राय: वह मन-ही-मन हँस देता। क्या शमसुद्दीन स्वयं भी अपनी हरकतों पर दिल में न हँसता था? उसे महसूस होता कि चाँद रानी से बातें करते समय वह अक्सर एक्टिंग करता। ऐसा लगता कि उसके अन्दर एक युद्ध हो रहा है और मन की असली बात को ज़बान पर लाने से वह कतराता है। कुछ दिन से तो विशेषत: शमसुद्दीन के बात करने के ढंग में अन्तर नज़र आ रहा था, जैसे वह किसी बात को छिपाने की कोशिश कर रहा था, जैसे उसके मन में एक उथल-पुथल हो रही थी। तब उसे पता चला कि शमसुद्दीन का लड़का नूरइलाही बीमार है और कई दिन से उसे आराम नहीं आ रहा। वह जानता था कि शमसुद्दीन धार्मिक वृत्ति का व्यक्ति होने के कारण कभी-कभी नमाज भी पढ़ता और रोज़ा भी रखता। लड़के की बीमारी ने धार्मिक प्रवृत्ति की ओर उसको और भी बढ़ा दिया था। इसी कारण जहाँ एक ओर उसने उनके घर आना-जाना कम कर दिया, वहाँ उनके घर आकर उनकी बातों और षड्यन्त्र में भाग लेना भी कम कर दिया। चाँद रानी उसे ताने देती, वह उसकी बात को टालने की कोशिश करता। हाँ, नूरइलाही की बीमारी की सुनकर वह चुप रहती।

शमसुद्दीन ने अस्पताल में उसका इलाज कराया। कोई लाभ न हुआ। इंजेक्शन-पर-इंजेक्शन लगाकर डॉक्टरों ने उसका शरीर छलनी कर दिया। फिर उसे अस्पताल में भरती करा दिया। लेकिन वहाँ इतना

शोर, इतना कलरव कि चंगा-भला आदमी बीमार पड़ जाय। डॉक्टर कम, बीमार कहीं ज़्यादा। हर जगह भीड़। डॉक्टरों के कमरे में भीड़, डिस्पेंसरी में जनसमूह, वार्ड भरे हुए। ऐसा मालूम होता कि आज़ादी के बाद अस्पताल के शासन में भी आज़ादी आ गई है। डॉक्टरों को पूरी आज़ादी थी—जैसे चाहें, जहाँ चाहें, प्राइवेट प्रैक्टिस करें, मरीज़ों की उपेक्षा करें, दवाई की जगह पानी वाला इंजेक्शन दें। राजनीतिक दलों का असर दूसरे स्थानों की तरह अस्पताल की चारदीवरी के अन्दर भी जा पहुँचा था। यहाँ भी डॉक्टरों को दलबन्दी के कारण बीमारों की ओर ध्यान देने का अवसर न मिलता। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे को निकम्मा सिद्ध करने में चिन्ताग्रस्त रहता। विरोधी दल की जीत से यदि अपनी नौकरी के छिन जाने का भय न था तो स्थानान्तर का डर तो लगा ही रहता था। दलबन्दियों के कारण न तो कोई वार्ड के मरीज़ों की ख़ुराक की ओर ध्यान देता, न उनके आराम की ओर। कभी-कभी तो पानी की मशीन बिगड़ जाती और दस-बारह दिन तक पानी की दिक्कत रहती। जब गर्मियों में पानी न मिलता तो बीमार लोग नहा न सकते, फ्लश लैट्रीन फेल हो जातीं और चारों ओर दुर्गन्ध फैल जाती। कोई परवाह न करता, अवकाश ही किसे मिलता! वार्ड के अन्दर न दिन को आराम न रात को चैन। कभी-कभी तो जनरल वार्ड में मरीज़ों की चीखें सारी रात न थमतीं और मजा यह कि अस्पताल के प्रबन्ध-कर्ताओं को इन छोटी-छोटी बातों की ओर ध्यान देने का अवकाश ही न मिलता। अन्दर मरीज़ों का शोर, बाहर उससे भी अधिक शोर।

अस्पताल से बाहर एक बोर्ड पर लिखा था—"यह अस्पताल है, यहाँ शोर मचाना वर्जित है।" लोग शेष सब-कुछ भूलकर 'शोर' शब्द याद करके शोर मचाने लगते। अस्पताल के बाहर ही आगन्तुकों का स्वागत होता। ठेले वाले चिल्लाकर कहते, "संतरा नागपुरी एक-एक आना।"

"अरे रतनसिंह के बाग़ का संतरा है। कभी नागपुरी संतरा भी

एक आने में बिक सकता है।"

"कौन झूठ बोलता है ? झूठ बोलने वाले के मुँह में···"

और झगड़ा शुरू हो जाता।

"बम्बई का चीकू, चार आने पाव।"

"बाबूजी ! यह झूठ बोलता है। अहमदाबाद का चीकू है, तीन आने पाव वाला। बम्बई का चीकू भला यह क्या बेचेगा ? यह है असली बम्बई का चीकू।" और वह शोर मचाने लगता, "बम्बई का असली चीकू।"

दूसरा उसके उत्तर में चिल्लाता। प्रलय मच उठती।

और उधर अस्पताल के बाहर कितनी दुर्गन्ध थी ! बाहर की दोनों दीवारों के साथ-साथ लोगों ने पेशाब करके उसकी शक्ल को बिगाड़ दिया था। कुछ मनचलों ने सुबह के अँधेरे से लाभ उठाकर दीवार के साथ-साथ गन्दगी के ढेर लगा रखे थे। इन लोगों के घरों में संडास नहीं थे, जंगल दूर था। फिर अपने देश में कितने घरों में संडास हो सकते हैं ! इस देश में तो अधिकांश लोगों को रहने को कमरा भी नहीं मिलता। फिर यह भी कौनसी बुरी जगह थी ? अधिकांश घरों और कमेटी के पाखानों से साफ़-सुथरी। वैसे म्युनिसिपल कमेटी ने एक लाख की आबादी वाले शहर में पेशाबघरों और संडासों का जाल बिछा रखा था। शहर के चारों भागों के लिए एक-एक संडास ! समूचे शहर में चार ! पूरे चार ! क्या लोकतन्त्र के इस युग में चार संडास कम होते हैं ? दूसरे, कमेटी के पास इतना फालतू समय भी तो नहीं होता कि इनकी सफ़ाई ही का काम करे। और अपने मेहतरों के पास कब समय होता है ? लोकतन्त्रात्मक शासन के मेहतर अपने मूल अधिकारों से पूर्णतया अवगत होते हैं। उन्हें काम के लिए विवश करने वालों को वे मज़ा न चखा दें ? इस छोटे-से प्रान्त की विधान सभा में इनके एक छोड़ पाँच प्रतिनिधि हैं और वे सदा ऐसे अवसरों की खोज में रहते हैं जहाँ इन लोगों की शिकायतों से लाभ उठाकर स्ट्राइक की धमकी दे

सकें। उनका नगर में कितना रौब है ! एक प्राथमिक शाला के अध्यापक से लेकर मुख्य मन्त्री तक सब उनसे डरते हैं। अध्यापक तबादले से डरता है और मुख्य मन्त्री चुनाव को ध्यान में रखता है।

अस्पताल के अन्दर ऐसा लगता है जैसे एक मेला लगा हो। बड़ी मुश्किल से आपकी बारी आई और डॉक्टर ने एक मिनट के अन्दर आपका सारी कैफियत जानकर नुसखा लिख दिया। दवाई लेना जान-जोखिम का काम है। सबसे पहले आपको अपना नाम रजिस्टर कराना होता है, जैसे आप मरीज नहीं, दस नम्बरिये हैं। वहाँ एक क्लर्क है—पचास नर-नारी पर्चियाँ लिये खड़े हैं। आपका नाम पचासवाँ है, क्योंकि आप सबसे बाद में पहुँचे हैं। लेकिन कुछ खादीपोश क्लर्क के पास सीधे पहुँच जाते हैं और उसके कान में कुछ कहकर पर्ची उसके हाथ में थमा देते हैं। वह पर्ची सबसे ऊपर आ जाती है और आपका नाम फिर भी पचासवाँ है और कुछ घण्टे तक पचासवाँ रह सकता है। भीड़ में एक आदमी से नहीं रहा जाता। वह गुस्से मे आकर कहता है, "यह है आजादी ! साले सब अपनों का खयाल रखते हैं या सफेद कपड़ों का। कोई बात नहीं, अगर इनकी अखबार में खबर न ली तो मुझे बाबूलाल कौन कहेगा ?" आखिर लोकतन्त्र है !

लीजिए, दो घण्टे बाद आपका नाम रजिस्टर हुआ। पर्ची वापस मिली, दवाई लेने की फिक्र हुई। वहाँ भी पचास-साठ लोग मौजूद। आप हैरान होते हैं कि लोगों को पर्चियाँ रजिस्ट्री कराने और दवाई लेने के अतिरिक्त कुछ और काम नहीं रह गया ? डिस्पेंसरी का दरवाजा बन्द है। जालीदार खिड़की में हाथ डालने की जगह है जैसे रेलवे बुकिंग ऑफिस की खिड़की। डिस्पेंसरी के अन्दर दो व्यक्ति हैं—व्यक्ति क्यों, कम्पाउंडर हैं। एक रजिस्टर में नाम दर्ज करता है, दूसरा दवाई बनाता है। इतने बड़े शहर में एक अस्पताल, उसमें एक डिस्पेंसरी, उसमें दो कम्पाउंडर—एक नाम रजिस्टर करने को, दूसरा दवाई बनाने को और साठ-साठ मरीज। साहब इन लोगों को भी तो लाज नहीं आती, बीमार

पढ़ने के सिवा कोई और धन्धा ही नहीं। फिर यहाँ आकर चिल्लाते हैं, शोर मचाते हैं!

"कम्पाउंडर साहब! मैं कब से खड़ा हूँ।"

"और बाक़ी सब बैठे हैं!"

"हा-हा-हा!"

"अब मेरी बारी है, सरदार साहब!"

"मैं तो खड़ी-खड़ी थक भी गई।"

"जो सबसे बाद में आये, सबसे पहले दवाई ले लेता है।"

"बाबू साहब! आप जानते नहीं मैं कौन हूँ?"

"कोई चपरासी होंगे।" एक व्यक्ति कहता है।

"होंगे नहीं, हूँ, शिक्षा-विभाग का चपरासी। साहब को बारह महीने जुकाम रहता है।"

"आपका मतलब, शिक्षा-विभाग को।"

"दस बजे दफ़्तर खुलता है, दस मिनट बाक़ी हैं और दस मिनट का रास्ता है।"

"अरे क्या दस-दस लगा रखी है?"

"तुम खामोश रहो जी! तुम नहीं जानते, सरकारी मुलाज़िम हूँ।"

"और तुम समझते हो, मैं भाड़ झोंकता हूँ!"

"शक्ल से तो ऐसा ही लगता है।"

"सावन के अन्धे हो न! रिफ्यूजी लगते हो। तुम बाहर से आये हुओं को यहाँ के लोग भाड़ झोंकने वाले दिखाई देते हैं।"

"अरे यार, छोड़। क्या बाहर-अन्दर की ले बैठे?"

"क्यों छोड़ूँ? जानते नहीं, तहसील का चपरासी हूँ! ऊँह, ऊँह, ऊँह।"

और वह खाँसता-खाँसता दुहरा हो गया। बलग़म गले में अटक गई। आँखों से पानी बहने लगा। गाल सुर्ख़ हो गए और बड़ी मुश्किल से उससे छुटकारा हासिल करते हुए और अस्पताल के बरामदे के फ़र्श

पर गुलकारी करते हुए कहा, "थू !"

"अरे यह क्या कर दिया ? बाहर थूकना था।"

"यह भी कौनसी बुरी जगह है यार !" बड़ी-बड़ी मूँछों वाला एक व्यक्ति बोला, "अगर बाहर जायगा तो लाइन में उसे जगह ही कैसे मिलेगी ?"

"फिर चपरासी है।"

"और वह भी तहसील का।"

एक आदमी ने वहीं खड़े-खड़े नाक साफ़ कर दी। बरामदे में एक बेंच पर कुछ औरतें बैठी हैं। उनके बच्चे पास खेल रहे हैं। एक बच्चा फर्श पर पेशाब कर रहा है, दूसरा उस पेशाब से फर्श को पोंछ रहा है। एक देहातिन बच्चे को पाँव पर बिठाकर टट्टी करा रही है। एक डॉक्टर साहब जल्दी-जल्दी पास से गुज़र रहे हैं। उनके साथ खादी का धोती-कुरता पहने एक साहब चले जा रहे हैं। डॉक्टर ने डिस्पेंसरी के दरवाजे पर मुक्का मारा, दरवाज़ा खुला।

"सरदार जी ! लालाजी को दवाई क्यों नहीं बनवाकर देते ?"

"साहब ! यह तो अभी आये हैं। इनसे पहले दो-दो घण्टे से लोग खड़े हैं।"

"खड़े रहें, कोई हर्ज नहीं। पहले लालाजी को दवाई दो। जानते नहीं, कौन हैं ?"

"लेकिन डॉक्टर साहब !......"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं। जो कहता हूँ, करो। मूर्ख कहीं का।"

"मूर्ख कौन ?" डॉक्टर के चले जाने के बाद एक व्यक्ति बोला।

"कम्पाउंडर या.........."

"अरे जबान सँभालकर। आजकल इनकी हुकूमत है।"

"हाँ भाई ! हमारे देश में हमेशा लिबास की हुकूमत होती है। पहले हैट की हुकूमत थी, अब गांधी टोपी की।"

"बेचारे गांधी का नाम योंही बीच में घसीटते हैं।"

"और उन्होंने शायद टोपी कभी पहनी भी न होगी।"

"उनके नाम पर देश में क्या नहीं हो रहा ?"

"अरे यार ! देश की बात छोड़ो। दवाई की बात करो।"

"कम्पाउंडर साहब ! यह क्या ? ये सबसे बाद में आवे और सबसे पहले दवाई ले गए ?"

"यह ज़ुल्म है।"

"यह अन्याय है।"

"मै पत्रों में लिखूँगा।"

"मैं 'तकरार' में इन सबकी पोल खोलूँगा।"

"मैं 'नूतन मानव' में लिखूँगा।"

"अरे बाबू ! कब से खड़ी हूँ।"

"बाई ! मैं तुमसे पहले आई थी।"

"झूठी कहीं की !"

"झूठी तू, तेरी माँ, तेरी बहन।"

"झूठा तेरा खानदान।"

"चल बदज़ात।"

"चुप री हरामज़ादी। जात की डोमन और चली अस्पताल में दवाई लेने।" उसने दूसरी को धक्का देते हुए कहा और लड़ाई ज़बान से हाथों तक पहुँच गई। शोर मच गया। जब इस कलरव में कम्पाउण्डर ने बाबूखाँ को नूर इलाही के लिए दवाई बनाकर दी, वह दूसरी थी—पीने के बजाय लगाने की। और जब दवाई पीने के बाद उसकी हालत बिगड़ने लगी तो डॉक्टर को बुलाया गया। उसने बग़ैर किसी तकल्लुफ़ के रस्मी तौर पर एक बार इन्कार किए बग़ैर फ़ीस जेब में ठूँसते हुए कहा, "इन्हें अस्पताल दाखिल कराना होगा, स्थिति चिंताजनक है।"

"चिन्ताजनक है ! सुबह तो हालत अच्छी थी। दवाई पीने के बाद ही ऐसा हो गया।"

"वह होता है, अक्सर होता है। आजकल दवाइयों की यह आम

शिकायत है। लेकिन इन्हें अस्पताल अभी ले चलिए।"

और जब वहाँ पहुँचे, कोई कमरा खाली न था। जनरल वार्ड में एक बिस्तर अभी-अभी खाली हुआ था। नूर इलाही को इंजेक्शन दिया गया। उसे आराम की ज़रूरत थी, लेकिन अस्पताल में आराम ही तो न था। रात-भर एक रोगी टाँग के दर्द से चिल्लाता रहा, दूसरा ऑपरेशन की तकलीफ से शोर मचाता रहा। साथ वाले वार्ड से दो स्त्रियों के रोने की आवाज़ आती रही। रात-भर न कोई डॉक्टर आया, न कम्पाउण्डर। न नर्स आई, न नींद आई। सुबह को फिर इंजेक्शन दिये गए। हालत अच्छी होने के बजाय खराब होती गई। अमरीका से मँगवाये गए नये-नये इंजेक्शन दिये गए, लेकिन जैसे नूर इलाही के शरीर में कम्यूनिज्म के कीटाणु हों, उस पर इन इंजेक्शनों का कोई असर ही न होता था। तब डॉक्टरों ने एक महत्त्वपूर्ण परामर्श दिया, "इसे तुरंत घर ले जाइए।"

शमसुद्दीन का कलेजा धक् से रह गया। क्या सचमुच उसका नूरे-चश्म, उसकी आँखों का प्रकाश, इस संसार में नहीं रहेगा? या खुदा! यह किस गुनाह की सज़ा है? अल्लाह! मेरे गुनाह माफ़ कर दो। मैं उनका कफ़ारा करूँगा। मेरे खुदा! मैं सचमुच गुनहगार हूँ। तौबा! इस उम्र में मैं ऐसी काली करतूतें कर रहा हूँ। या रब! अब बख्श दे। तौबा मेरी। घर में कुहराम मच गया। स्त्रियाँ अन्दर छिप-छिपकर रोने लगीं। लेकिन बैकुण्ठ हकीम दादूमल को बुलाकर ले गया। उसने इन्हें आश्वासन दिलाया, "घबराने की बात ही क्या थी? ये आजकल के डॉक्टर विदेशी इंजेक्शनों के पीछे मरते हैं और बीमारी को पहचानते तक नहीं। यदि एक सप्ताह में आराम न आया, तो वैद्यगिरी छोड़ दूँगा।" और सचमुच नूर इलाही को आराम आने लगा।

शमसुद्दीन धार्मिक वृत्ति का व्यक्ति होने के कारण साधुओं और फकीरों के पास जाता रहता था। कभी-कभी बैकुण्ठ भी उसके साथ चला जाता। उसे पता चला कि एक समझदार फ़कीर दूसरे नगर में

आया हुआ था। यह सूचना पाते ही शमसुद्दीन बैकुण्ठ को साथ लेकर उसके पास पहुँचा। शमसुद्दीन को सम्बोधित कर वह साधु बोला, "घबराओ नहीं, बच जायगा।"

"कौन बच जायगा?" उसने विस्मित होकर पूछा।

"तुम्हारा लड़का। और कौन? घबराओ नही। कुर्बानी दो। समझे? कुर्बानी।"

"हुज़ूर! मैं एक बकरा कुर्बान करूँगा।"

"हा-हा-हा," फकीर अजीब ढंग से ठहाका मारकर हँसते हुए बोला, "वह तो बकरे की कुर्बानी हुई। तुम कुर्बानी दो।"

"हुज़ूर! मैं कुर्बानी दूँ? अपनी कुर्बानी?" उसका शरीर काँप रहा था।

"हाँ, तुम कुर्बानी दो, मियाँ तुम—खराब आदतों की, बुरी इच्छाओं की, लालच की, लोभ की, बुरे कामों की, समझे? त्याग करना सीखो।"

"हुज़ूर!"

"सच्चा त्याग करो, सच्ची कुर्बानी दो। अगर बकरे की कुर्बानी से सवाब (पुण्य) मिलता हो तो जन्नत की तमाम जगह क़साइयों के लिए मख़सूस हो जाय, दूसरों को वहाँ जगह ही न मिले। लेकिन, अल्लाह तआला इन्सान की ख्वाहिशात की कुर्बानी माँगता है, अपनी मख़लूक़ (जनता) की खिदमत माँगता है। कर भला हो भला। यह बात बिना मतलब नहीं कही गई थी।"

शमसुद्दीन हाथ जोड़े बैठा रहा।

"गुनाहों से बचो। गुनाहों का कफ़ारा (पश्चात्ताप) करो। किसी का बुरा न सोचो, बुरा न करो। नेकी करो और दरिया में डाल दो। यह बहुत बड़ी सचाई है, बेटा! इसे ग़ौर से सोचो और इस पर अमल करो तो सुख-ही-सुख है। खिदमत करो। यही सच्ची इबादत (पूजा) है, यही सच्ची कुर्बानी है। जब उसके बन्दों की भलाई सोचोगे, खुदा-

वन्द करीम अपने-आप खुश होगा।"

बैकुण्ठ ने देखा, उस दिन से शमसुद्दीन में एक विशेष परिवर्तन आ गया। उसकी सबसे पहली प्रतिक्रिया यह हुई कि उसने चाँद रानी के घर आना-जाना और उससे मिलना-जुलना कम कर दिया। जब वह उससे इस बात की शिकायत करती, वह चुप रहता। केवल कृष्ण के विरुद्ध षड्यन्त्र में भाग लेना उसने बन्द कर दिया। जब उसकी उपस्थिति में अन्य लोग केवल कृष्ण की बात करते, शमसुद्दीन चुप्पी साधे रहता। बैकुण्ठ के अतिरिक्त शेष सब लोग इस परिवर्तन को देखकर आश्चर्यचकित होते।

-

एक दिन जब शमसुद्दीन चाँद रानी के घर आया तो उसके हाथ में एक पत्रिका थी। चाँद रानी ने उसके हाथ से पत्रिका छीन ली और उसे देखते ही ऐसे तड़प उठी जैसे उसके अन्दर बिजली के तार हों। उसका शरीर काँपने लगा, आंखों से चिनगारियाँ बरसने लगीं और क्रोध से गाल लाल हो उठे।

वह चिल्लाकर बोली, "इनकी फोटो यहाँ कैसे छप गई ?"

"यह तो सम्पादक जाने।"

"तो क्या हमारा सारा श्रम अकारथ गया ? बैकुण्ठ कहाँ गया ? अब तक वह क्या करता रहा ?"

"इसमें उसका भी क्या दोष है ?"

"तो फिर किसका दोष है ? हर बात में मेरा ही दोष हुआ ? इन्स्पेक्टर साहब ! आपको मालूम नहीं, उस गौहर के बच्चे को हमने कितना रुपया दिया ?"

"केवल रुपया ?"

"और डाक पर कितना खर्च हुआ ?"

"वह तो मुझे सब मालूम है। केवल कृष्ण के विरुद्ध कितना प्रोपे-

गण्डा हुआ ! पत्रों में उसके बारे में क्या-क्या छपा ! अखबारों के कटिंग्ज़ किस प्रकार हिन्दुस्तान-भर की पत्रिकाओं को भेजे गए ! इन पत्रिकाओं के सम्पादकों से प्रार्थना की गई कि ऐसे आदमी की कोई चीज़ न छापें। लेकिन........"

"लेकिन क्या ?" चाँद ने पूछा ।

"लेकिन," शमसुद्दीन ने उत्तर दिया, "वे हमारे गुलाम नहीं। हिन्दुस्तान में प्रेस को आज़ादी है। यदि यहाँ मुक़ामी अखबारों को इस हद तक आज़ादी हासिल है कि वे हमसे पैसे लेकर केवल कृष्ण के खिलाफ़ गालियाँ छाप सकें, तो दूसरे रिसालों (पत्रिकाओं) को भी यह आज़ादी हासिल है कि उसे पैसे देकर उसकी चीज़ छाप सकें।"

"इन्स्पेक्टर साहब ! आज आप उसकी फोटो छपने से खुश नज़र आ रहे हैं।"

"खुश तो आप भी हैं, लेकिन ज़बान पर वह खुशी लाना नहीं चाहतीं।"

"मैं क्यों खुश हूँगी ?"

"अगर आपको वह खुद नहीं मिल सके, उनकी तस्वीर तो मिल गई।"

"मैं न उसकी परवाह करती हूँ, न उसकी तस्वीर की।"

"आपका दिल यह नहीं कह रहा।"

"आप कैसे कह सकते हैं ?" चाँद ने पूछा ।

"हाथ धोकर उसके पीछे पड़ने का मतलब ही यह है कि आप उसकी बहुत परवाह कर रही हैं। अगर वह आपको मिल जाता, आपके क़दमों पर सिर रख देता या अपने क़दमों पर सिर रख लेने देता तो मामला और हो जाता। लेकिन यह स्पष्ट है कि आपके दिल में आज भी उसके लिए जगह है। फिर हो भी क्यों न ? कितना हसीन है वह ! उसकी आँखें कितनी बांकी हैं। और देखिए, वह सिर के बीच माँग निकालता है।

"अच्छा इन्स्पेक्टर साहब ! खामोश रहिए।" वह गुस्से से बोली,, "मैं समझा रही हूँ, आप मुझे चिढ़ा रहे हैं। लेकिन आप देखेंगे कि जिस सिर पर यह माँग है, वह सिर ही न रहेगा।"

"हा-हा-हा ! आप समझती हैं कि आप तीन-चार गधों की मदद से शेर का शिकार कर सकती हैं ?"

"आप स्वयं को इस सूची में सम्मिलित क्यों नहीं कर रहे ?"

"इसलिए कि मैं उनसे अलहदा हो चुका हूँ। और आपसे भी यही तजवीज़ करता हूँ कि आप उसके खिलाफ़ साजिश बन्द कर दीजिए, वरना आपको पछताना पड़ेगा। एक बाज़ी में तो आपको मात खानी पड़ी।"

"कैसे ?"

"साज़िश पकड़ी गई।"

"पकड़ी गई !" वह घबराकर बोली।

"और उसके साथ साज़िश करने वाला भी।"

"कौन ?"

"देवकीप्रसाद का भतीजा।"

"कौन, कान्ताप्रसाद ?"

"जी !"

"कैसे ?"

"वह दफ्तर की मशीन पर चोरी-चोरी अर्ज़ी टाइप करते हुए पकड़ा गया।"

"फिर ?"

"इस जुर्म में उसे मुअत्तल कर दिया गया।"

"और गोवर्धनप्रसाद खामोश रहे ?"

"यह तो मुमकिन नहीं था। वह भागा-भागा गोपालदास के पास गया। गोपालदास मशहूर सेठ और सियासी (राजनीतिक) लीडर हैं। प्रेस पर भी उनका कण्ट्रोल है। 'गाली' अखबार दरअसल उन्हीं के पैसे

से चलता है। उनके कहने-सुनने से वह बहाल तो हो गया, हाँ उसका तबादला न रुक सका।"

"और गौरीशंकर ?" वह मुँह से पसीना पोंछती हुई बोली।

"यह सिद्ध हो गया कि दरअसल सारी साज़िश के पीछे उसका हाथ है। उससे जवाब तलब किया गया। जवाब तसल्लीबख्श न होने पर उसके करेक्टर रोल में उसके खिलाफ़ रिमार्क्स लिख दिये गए जिससे उसकी सर्विस को बहुत धक्का लगा और साथ ही उसका यहाँ से दूर तबादला हो गया। देवकीप्रसाद बच गया।"

"कैसे ?"

"दरअसल जब उसने साज़िश फेल होते देखी, उसने खुद ही जाकर सारा इल्ज़ाम गौरीशंकर पर थोप दिया और आप बच निकला। खैर दूसरों को तो मुनासिब सज़ा मिल गई।"

"यह तो बहुत बुरा हुआ।"

"कुछ बुरा नहीं हुआ," शमसुद्दीन ने उत्तर दिया, "यदि एक औरत की ज़िद के लिए कुछ आदमियों को सख्त नुक़सान पहुँचा तो मामूली बात है। आम तौर पर औरतों की ज़िद खून पिये बगैर नहीं मानती।"

"मेरी ज़िद अब भी खून माँगती है।"

"देवकीप्रसाद का ?"

"केवलकृष्ण का।"

"केवलकृष्ण का ?"

"हाँ। अब प्यास उसके खून से ही बुझेगी।"

"आप होश में नहीं हैं," शमसुद्दीन उसके चेहरे की ओर देखकर गम्भीरतापूर्वक बोला।

"होश में रहकर खून की लालसा मिट जाती है।" वह दीवार में आँखें गाड़ती हुई बोली। उसकी शक्ल एकदम भयानक बन गई। उसका चेहरा काला सियाह हो गया। उसकी आँखों से डर बरसने लगा।

शमसुद्दीन घबरा गया। आज पहली बार वह इतनी बदसूरत लग रही थी। क्या उसकी आत्मा भी ऐसी ही कुरूप है? एक नौजवान का खून माँगने वाली रूह खूबसूरत कैसे हो सकती है? बुड्ढा शमसुद्दीन काँप उठा। उसे अपने युवा बेटों की याद आ गई। अगर उसके साथ भी कोई औरत ऐसा ही सलूक करे तो·······नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, कभी नहीं हो सकता। वह खून नहीं होने देगा, कभी नहीं होने देगा। उसकी आत्मा खून के नाम से काँप उठी। उसे फ़क़ीर की बातें याद आ गईं। उसके दिल में केवल कृष्ण के लिए सहानुभूति उमड़ आई, इस औरत के खिलाफ़ घृणा उत्पन्न होने लगी। उसे खुद पर गुस्सा आने लगा, अपने-आपसे घृणा आने लगी। इस स्त्री को और उसके कुत्सित कृत्यों को जानते हुए भी, वह उसके जाल में क्यों फँसा रहा? उससे दूर क्यों नहीं भाग गया? इस उम्र में अपनी ख्वाहिशों का गुलाम होकर ऐसी औरत के चक्र में फँसा रहा! लेकिन वह क्या जानता था कि वह इतनी नीच बन सकती है। मगर वह उसके सियाह काम को कभी कामयाब न होने देगा। वह आज किसी समय रात को अकेले में बेंकुठ से मिलेगा और उसे समझाएगा। अगर वह कुर्बानी के लिए तैयार हो जाय तो······

"क्या सोच रहे हैं?"

"कि अब मुझे चलना चाहिए।"

"इतनी जल्दी काहे की है?"

"ज़रूरी काम है।"

"फिर कब मिलोगे?"

"कह नहीं सकता। शायद न ही मिल सकूँ।"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि बूढ़ा हो रहा हूँ। ज़िन्दगी का क्या भरोसा?"

"आज इतने निराश क्यों हो रहे हैं?"

"इस दुनिया की बातों को देखकर कोई निराश कैसे न हो?

आदमी का खून आज कितना सफेद हो गया है !"

"कल कब तशरीफ़ लाइएगा ?" चाँद रानी ने बात को बदलने के विचार से कहा।

"कल तो मैं दिल्ली जा रहा हूँ।"

"ओह ! यह तो अच्छी बात है। मेरे लिए एक कालीन लाइएगा।"

"आपको कहने की क्या ज़रूरत थी ? इसलिए कि बाक़ी चीजें तो सब ला चुका हूँ, एक इसी की कसर थी।" उसकी बात में घोर व्यंग्य भरा हुआ था।

और वह चला गया।

जब गौरीशंकर रात को उसके पास आया, वह उदास और विक्षुब्ध था। चाँद रानी बोली, "मुझे सब पता चल गया है और मुझे बहुत दुःख हुआ है। आपके स्थानान्तर की सूचना बहुत बुरी है। लेकिन मुझे यह कभी आशा नहीं थी कि आप लोग इस प्रकार बचकाना तरीके से काम करेंगे।"

"यह इन दोनों बूढ़ों की मूर्खता है जो उन्होंने एक छोकरे के हाथ में सारा काम सौंप दिया। छोकरा आखिर छोकरा ही होता है, चाहे वह जी० पी० का भतीजा ही क्यों न हो। दफ़्तर में बैठकर अपने शत्रु के विरुद्ध अर्ज़ी टाइप करना कहाँ की बुद्धिमानी है ?"

वह चुप रही।

"दरअसल इन दोनों बूढ़ों ने उसकी झूठी प्रशंसा करके उसे इतना घमण्डी बना दिया कि वह किसीको कुछ समझता ही न था और किसी से परामर्श करना भी अपमान मानता था। पिछले दिनों उसने एक और फिजूल हरकत की। एक चरित्रहीन स्त्री से केवल कृष्ण के विरुद्ध लम्बे-लम्बे बयान प्रकाशित करा दिए, उसके पति कैलाश को शहर-भर में केवल कृष्ण के खिलाफ़ प्रोपेगंडा करने भेज दिया।"

"क्या ?"

"कि वह उसकी पत्नी को बुरी नज़रों से देखता है और·······"

"और क्या ?"

"अब कहते हुए भी शर्म आती है। आप स्वयं ही समझ लीजिए।"

"और उसकी पत्नी कैसी है ?" चाँद ने पूछा।

"आप उससे लाख दर्जा सुन्दर हैं।"

"लेकिन उससे केवल कृष्ण की भी तो बदनामी हुई।"

"ऐसी बातों से आदमी की क्या बदनामी होती है, ख्याति अवश्य हो जाती है। हाँ ऐसे व्यक्ति की क्या इज्जत रह सकती है जो स्वयं ही अपनी पत्नी के विषय में ऐसा प्रोपेगंडा करे ?"

"लेकिन आप तो यह बतलाइए कि क्या आप इसे केवल कृष्ण के हाथों अपनी अन्तिम हार मानते हैं ?"

"मैं तो चार वर्ष से उसके पीछे हाथ धोकर पड़ा हूँ और सदा मुँह की खाता रहा हूँ।"

"इसका मतलब यह है कि खतरनाक शत्रु है।"

"और प्रबल।"

"तो उससे छुटकारा क्यों नही पा लेते ?"

"जैसे छुटकारा पाना सम्भव है।"

"असम्भव भी नहीं।"

"कैसे ?"

"अगर मेरी मानो और सौगन्ध खाओ कि इसके बारे में भूलकर भी किसीसे बात न करोगे।"

"लेकिन······"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं," चाँद ने उत्तर दिया, 'मैं तो यह जानती हूँ कि साँप से बचने का केवल एक उपाय है।"

"क्या ?"

"कि उसे जान से मार डालो।"

"क्या आप उसके बारे में भी यही प्रस्तावित करती हे ?" गौरी-शंकर ने घबराकर पूछा।

"डर गए ? मेरे पुलिस के जवान घबरा गए ?" चाँद ने व्यंग्यपूर्वक कहा, "पहले तो स्वयं यही प्रस्तावित कर रहे थे, अब डर गए ?"

"नहीं-नहीं, ऐसा तो नहीं," वह माथे से पसीना पोंछते हुए बोला ।

"आपको कुछ नहीं करना पड़ेगा । न गोली चलानी होगी, न तलवार । केवल उससे मित्रता गाँठकर घर पर बुलाना होगा ।"

"घर पर ?"

"अच्छा, घर पर न सही । कहीं बाहर पिकनिक पर ले जाओ । खाना मैं बनाकर दे दूँगी और उसमें......"

"नहीं-नही ।"

"अच्छा, तुम मेरी साड़ी पहन लेना, मैं तुम्हारी वर्दी पहन लूँगी । उसे खाना खिलाने के बाद फिर बदल लेंगे ।"

"आप व्यंग्य कर रही है । मेरा खून सूख रहा है ।"

"और मेरा खून खौल (उबल) रहा है," वह दाँत पीसकर बोली, "कितना अन्तर पड़ गया है स्त्री और पुरुष के खून में ! यदि तुम स्त्री होते और मैं पुरुष, तो तुम्हारे चरणों पर उन सब पुरुषों के शीष लाकर रख देती जिनसे तुम घृणा करते हो । केवल एक इशारे पर ।"

"लेकिन मैं इसे पाप समझता हूँ कि शत्रुता की ज्वाला को शान्त करने के लिए मैं शत्रु के खून से होली खेलूँ ।"

"यदि आप नहीं खेलेंगे तो वह खेलेगा ।" वह उसके और समीप खिसककर, उसके कन्धों पर हाथ फेरती हुई बोली, "प्यारे ! पाप और पुण्य के बारे में आपके विचार बहुत पुराने और घिसे-घिसाए हैं । मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि मैं इन विचारों की मान्यता करती हूँ, पर हैं फिर भी पुरातन और जर्जर ही ।"

वह चुप रहा ।

वह उसी प्रकार उसके कन्धों पर हाथ फेरती हुई बोली, "बड़ों ने बार-बार यही कहा है । धर्म की पुस्तकों में भी यही लिखा है कि शत्रु, शत्रु ही होता है, चाहे वह मिट्टी का ही क्यों न बना हो । उससे उपेक्षा

बरतो, वह तुम्हें खा जायगा। आखिर विद्वानों और बड़ों को क्या पड़ी थी कि झूठ बोलें। उन्होंने सचमुच इस बात को आज़मा कर देखा होगा।"

वह खामोश बैठा कुछ सोचता रहा। अब वह उसके सिर को अपनी गोद में रखकर, उसके सिर के बालों में उँगलियाँ फेरती हुई बोली, "मुझे केवल से कोई शिकायत नहीं। उस बेचारे ने मेरा क्या बिगाड़ा है। सच बात तो यह है, मैंने उसे देखा तक नहीं। आज तक हमारी भेंट भी नहीं हुई। लेकिन तुमसे और दूसरे लोगों से जो सुना है, उससे अनुमान लगा रही हूँ कि वह मनुष्य के रूप में जीता-जागता साँप है और साँपों के बारे में मैं उन लोगों से कदापि सहमत नहीं जो उन्हें दूध पिलाकर पालते हैं या उन्हें पूजते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि हम उन्हें इसलिए दूध पिलाते हैं कि वे पलकर हमें डस सकें और उनकी पूजा करके हम उन्हें यह विश्वास दिलाते हैं कि हम उनके काटने को अच्छा समझते हैं। साँप को आप दूध पिलाइए, शहद खिलाइए, जब वह अवसर पाएगा, आपको डस लेगा और डसने से अमृत नहीं, विष निकलेगा।"

"आप तो एक वकील से भी अच्छी बहस कर सकती हैं।" वह उसकी गोद में लेटा, उसकी आँखों में आँखें डालकर बोला।

वह कहती गई, "अभी तो तुम्हारा दफ्तर से स्थानान्तर कराया है, फिर इस संसार से कराने की कोशिश करेगा।"

"तुम ठीक कहती हो।"

"तो फिर बात पक्की है न ?"

"यदि पक्की नहीं भी थी तो आपने अब पका दी।" वह मुस्कराकर बोला, "आप हर बात इस ढंग से करती हैं कि कोई इनकार ही नहीं कर सकता।"

"तो इतवार को ?"

"हाँ, इतवार को। आज क्या दिन है, बुध ?"

"हाँ।"

"मैं कल सुबह एक काम से बाहर जा रहा हूँ, शनि की सुबह को लौटूंगा।"

"लौटते ही यहाँ आओगे ?"

"और कहाँ जा सकता हूँ ?" वह उसकी ठुड्डी को छूते हुए बोला।

शमसुद्दीन ने बैकुण्ठ को चाँद के निर्णय से अवगत कराया तो वह काँप उठा। क्या वह उसकी हत्या करने जा रही है? क्या वह उसकी जीवन-ज्योति को बुझाना चाहती है? अपनी ज़िद पूरी करने के लिए एक मनुष्य के ख़ून से होली खेल रही है। इतने दिनों से उसके घर रहते हुए, उसकी बुरी आदतों को देखते हुए भी, वह उससे घृणा न कर सका था। वह उसकी परस्पर-विरोधी भावनाओं को देखकर क्रोध में नहीं आता था। क्या यह साधारण बात थी कि एक ही व्यक्ति के मन में इस प्रकार की परस्पर-विरोधी भावनाएँ इस मात्रा में विद्यमान हों—प्रेम और घृणा दोनों की भावनाएँ? यदि वह एक समय इतने लोगों के प्रति प्रीति की भावना प्रदर्शित कर सकती थी, तो उसी समय दूसरों के प्रति अप्रीति की भावना भी दरशा सकती थी। कितने आश्चर्य की बात है कि एक ही व्यक्ति के छोटे-से दिल में एक ही समय किस प्रकार भिन्न-भिन्न भावनाएँ छिपी होती हैं। प्रीति और अप्रीति, प्रेम और घृणा, अहंकार और विनम्रता, सौहाद्र : र वैमनस्य, सहयोग तथा प्रतिद्वन्द्विता की विपरीत और प्रतिकूल भावनाएँ एक ही हृदय में साथ-साथ पलती हैं, एक-दूसरे के सामीप्य में बसती हैं। और फिर भी वह एक व्यक्ति है! वास्तव में कोई भी पुरुष एक व्यक्ति नहीं होता। उसमें कई व्यक्ति होते हैं जो सदा रूप बदलते रहते हैं। प्रेमिका के लिए प्राण न्योछावर करने वाला प्रेमी, दूसरे प्राणी के प्राण हर लेने में कोई झिझक अनुभव नहीं करेगा।

अपने बच्चे को जलती आग से निकालने के लिए जो स्त्री अपने जीवन को जोखिम में डाल सकती है, वही स्त्री सन्तान-प्राप्ति के लिए किसी-दूसरे बच्चे की हत्या भी कर सकती है। एक व्यक्ति, एक व्यक्ति नहीं होता और चाँद रानी भी एक स्त्री नहीं थी। एक क्षण प्रेम के मधुर गीत गाने वाली चाँद रानी, दूसरे क्षण घृणा की ज्वाला भड़का सकती थी। वह अनेक लोगों को प्रेम-दान करती, उनके हृदयों को शान्ति प्रदान करती। वह अपने स्वभाव से प्रसन्न थी, अपने-आपसे सन्तुष्ट थी। उसने अपनी आत्मा को कभी इस बात की आज्ञा नहीं दी कि उसे फटकार सके। कभी-कभी बैकुण्ठ को यह अहसास होता कि उसकी आत्मा है ही नहीं—बिलकुल मर चुकी है। लेकिन वह आत्मा ही क्या जो मर जाय? वह मरी नहीं थी, मोटी-मोटी तहों में छिपी हुई थी। समाज की दृष्टि में शायद यह एक पाप था कि एक स्त्री इतने पुरुषों से नाता रखे। किन्तु इतने पुरुषों के मन को बहलाने वाली औरत आत्मा के बगैर हो, यह भी तो असम्भव था। तो फिर वह केवल कृष्ण का इतना घोर विरोध क्यों कर रही है? इसलिए कि वह उससे प्रेम करती है। प्रेम और घृणा के भाव उसके हृदय में एक-दूसरे के निकट सामीप्य में बैठे हुए थे और यदि वह उसके प्रेम-उपहार को स्वीकार कर लेता, तो घृणा का भाव स्वयं प्रीति की भावना में परिणत हो जाता।

लेकिन ऐसा न हो सका। तो क्या वह उसे इस बात की आज्ञा दे दे कि वह एक व्यक्ति की जीवन-ज्योति को इस प्रकार बुझा दे? फिर कानून भी उसके जीवन-दीप को बुझा दे, और फिर उसके साथ उससे मिलने वाले सब लोग फँसें। वह स्वयं भी इस उलझन में फँसे। पत्रों में इस मुक़द्दमे का वर्णन हो। सारी घटनाओं को कुरेदा जाय और उनके साथ बैकुण्ठ की अपनी बदनामी हो। लेकिन वह तो जोश से अन्धी है, क्रोध से पागल है, उसकी बात को कब मानेगी? इस समय परिणाम की उपेक्षा कर वह पर्वत से टक्कर लेने तक को तैयार

थी। वह स्वयं तो तबाह होगी, अपने साथ दूसरों को भी बर्बाद करेगी। जब आँधी वेग गति से चलेगी तो उससे कौन बच सकेगा ? बाढ़ तो मार्ग में आने वाली प्रत्येक वस्तु को बहा ले जाती है। उसे १६४७ की याद आ गई—क्रान्ति के युग की याद, जब विदेशी शासन के विरुद्ध उभरे हुए विष को अपने ही भाइयों के खिलाफ़ इस्तेमाल किया जा रहा था, जब भारत को क्रान्ति के तूफ़ान ने परेशान कर रखा था और उधर क्रुद्ध प्रकृति अपनी ध्वंसात्मक प्रवृत्ति से कमी पूरी कर रही थी। उसे याद आया, जब उसने एक पुल पर खड़े होकर नदी के प्रचण्ड वेग को देखा था। शान्ति से बहने और खेतों को सींचने वाली वह जीवनदायिनी नदी कितना भयानक रूप धारण किये हुए थी और अपने वेग-प्रवाह में स्त्री और पुरुषों, पशु-पक्षियों, मकानों और पेड़ों को बहाए लिये जा रही थी। उसका क्रोध उग्र रूप धारण किये हुए था और यह वही नदी थी जिसके किनारे प्रतिवर्ष असंख्य नर-नारी स्नान करते थे, जिसके तीरों पर प्रति वर्ष मेला लगने पर लाखों स्त्री-पुरुष अपने पापों को धोते थे। और उसी नदी के प्रचण्ड वेग को तथा उसके परिणाम को उसने स्वयं अपनी आँखों से देखा था। वह दृश्य आज भी बैकुण्ठ की आँखों के सम्मुख तैरने लगा।

लेकिन वह ख़ाहमख़ाह बन्धन में पड़ा हुआ था। उसने अकारण अपने-आपको शृङ्खलाओं में जकड़ रखा था और इस प्रकार बन्दी बनकर चप्पू के बगैर नौका में सवार हो बैठा था और नौका प्रवाह के साथ बही जा रही थी। इसमें उसे आनन्दानुभव हो रहा था। लेकिन नैया अब तक शान्त पानी के ऊपर चल रही थी। उसे न तूफान का सामना करना पड़ा था, न भँवर का। उसकी नौका न ही चट्टान से टकराई थी, न रेत में धँसी थी। वह नैया में सहज गति से, आनन्दपूर्वक नदी के प्रवाह के साथ बहा जा रहा था। ऐसा लगता जैसे स्वप्नों के संसार में, परियों के देश में, नदी के मधुर गीत की तान के साथ बहा जा रहा है। और सहसा उसने देखा कि सामने, नदी के मध्य

एक चट्टान सिर उठाये खड़ी है। अगर वह पूर्ववत् आराम से बैठा रहा तो नौका चट्टान से टकराकर टुकड़े-टुकड़े हो जायगी। उसे चप्पू चलाना होगा, अथवा नैया से छलाँग लगाकर किनारे तक तैरना होगा, नहीं तो चट्टान और भंवर, तबाही और बर्बादी। वह काँप उठा।

लेकिन काम इतना सुगम भी न था। तो इससे क्या? सदा सुगम कार्य ही को क्यों सोचा जाय? कठिन कार्य से क्यों डरे? संसार में सुगम तो कुछ भी नहीं। शमसुद्दीन ने भी कौनसा आसान काम किया है? उसमें कितना घोर परिवर्तन आ गया है! उसने श्रम तथा प्रयास द्वारा उत्सर्ग किया, साधु की बात मानकर त्याग किया, अपनी इच्छा और वासना की कुर्बानी दी। क्या इतने लोगों को तबाही से बचाने के लिए वह अपने सुख की कुर्बानी नहीं दे सकता? वह अभी युवा है, जीवन के द्वार पर खड़ा है, ज़िन्दगी उसके सामने खड़ी मुस्करा रही है। यात्रा के बिलकुल प्रारम्भ में उसकी एक अजीब औरत से भेंट हुई है। केवल भेंट ही क्यों? एक बार गलत क़दम उठाकर वह उसी डगर पर चली जा रही है। उस बेचारी को इस बात का पता नहीं कि मार्ग अपने-आपको स्वयं नहीं सुधारते, पथिकों को रास्ते सँवारने होते हैं। लेकिन चाँद थी कि इस सिद्धान्त की उपेक्षा करती हुई एक ही मार्ग पर चली जा रही थी। रास्ता भी अभी तक उसकी इच्छा के अनुसार बनता जा रहा था। परन्तु क्या समतल मार्ग पर चलने वाली पथरीले रास्ते पर चल सकेगी? दरअसल उस बेचारी का भी क्या दोष था? क्या समाज अपने दायित्व से मुक्त हो सकता था? यदि समाज उसकी माँ से दुर्व्यवहार न करता और उसे साधारण सुखी जीवन बिताने की सुविधा प्रदान करता, तो वह अपनी लड़की को केवल पैसे के लिए, उसकी इच्छा के विरुद्ध, उस काले-कलूटे, गन्दे मोटे अफ़सर के हवाले करने पर विवश न होती। और चाँद का केसरचन्द जैसे तथाकथित पुरुष के साथ झूठ-मूठ की पत्नी बनकर रहना भी इस जर्जर और साधनहीन समाज में असहाय नारी की

विवशता की पुकार थी। माँ पेट की भूख मिटाने के लिए, शरीर को बेचने के लिए विवश हुई थी, और बेटी शरीर की क्षुधा को शान्त करने के लिए काया का सौदा कर रही थी। दिलेरसिंह और राय साहब, शमसुद्दीन और परवाज़, ये सब इस जीर्ण-शीर्ण समाज के जराग्रस्त खण्ड थे, जो छिपकर, दूसरों की दृष्टि से बचकर, ऐसे कुकृत्य कर रहे थे। समाज में दूसरों की नज़र में वे सौजन्य की प्रतिमा बन कर रहते, धार्मिक तथा शैक्षणिक संस्थाओं का मार्ग-दर्शन करते, सामाजिक तथा राजनीतिक आन्दोलन के पथ-प्रदर्शक बनते, लम्बे-लम्बे भाषण देते और नवयुवकों को सदाचार और सभ्य-व्यवहार की प्रेरणा देते और यहाँ आकर ये लोग.............जब समाज के इन ठेकेदारों का यह हाल है, जब इन तथाकथित राष्ट्रनिर्माताओं और नेताओं के ये लक्षण हैं तो बेचारी चाँद पर क्यों दोष लादा जाय? उसका यही दोष था कि विशेष परिस्थिति के कारण उसे सही ढंग की शिक्षा अप्राप्य रही और उचित शिक्षा के अभाव में दायित्व को कैसे समझ और निभा सकती? उसके साथ इतने दिन रहकर बैकुण्ठ के दिल में उसके प्रति घृणा नहीं उत्पन्न हुई थी, इसके विपरीत उसके मन में सहानुभूति की भावना जाग्रत हुई थी। निकट सामीप्य से देखने से उसमें कोई ऐसी बात नज़र नहीं आई जिससे वह घृणा की पात्र बन सके। हाँ, केवल कृष्ण के पीछे वह अवश्य हाथ धोकर पड़ी थी और इसका मूल कारण भी प्रेम-भावना थी। जब इस भावना की पूर्ति होने के बजाय उसे ठेस लगी, तो वह प्रतिकार की भावना में परिणत हो गई।

त्याग! उत्सर्ग! कुर्बानी! साधु के शब्द बैकुण्ठ के कानों में गूँजने लगे।

शमसुद्दीन के शब्द वातावरण में छा गए, "बैकुण्ठ! चाँद को खतरनाक रास्ते पर जाने से रोको। वह तवाज़ुन (सन्तुलन) खो चुकी है, और खतरनाक हरकत करने जा रही है। उसे बचाओ। उसे

समझाओ और राहे-रास्त पर लाओ। समय कम है, बहुत कम।"

समय कम था और समय की माँग थी—कुर्बानी।

केसरचन्द शनि की सुबह को बम्बई गया था और एक सप्ताह बाद लौट रहा था। बैकुण्ठ ने जॉर्ज को शाम को पिक्चर देखने के लिए कह दिया था। दरअसल उसने चाँद से यह तय कर लिया था कि जॉर्ज को सिनेमा भेजकर वे दोनों होटल पर खाना खायेंगे। शाम के सात बजे बैकुण्ठ बाहर से हांफता हुआ आया और चाँद रानी के कमरे में पहुँचा। उसे इस हालत में देखकर वह घबरा उठी और बोली, "क्या बात है ?"

"गज़ब हो गया।"

"क्या ?"

"पुलिस को खबर हो गई।"

"किस बात की ?"

"कि तुम केवल कृष्ण को······"

"खामोश !" वह उसके मुँह पर हाथ रखकर बोली, "तुम्हें कैसे पता चला ?"

"सी० आई० डी० के एक इंस्पेक्टर से।"

"लेकिन यह बात कैसे बाहर निकली ?"

"यह तो नहीं जानता, शमसुद्दीन········"

"समझ गई, उस बुड्ढे खूसट ने अपनी असलियत ज़ाहिर कर दी। लेकिन इससे क्या होता है ?" वह उपेक्षा के भाव से बोली, "पुलिस हमारा क्या बिगाड़ सकती है ?"

"क्या बात कर रही हैं आप ?" वह हैरानी से कहने लगा, "आप को षड्यन्त्र के जुर्म में प्रातः ही पकड़ लिया जायगा।"

"लेकिन प्रमाण क्या होगा ?"

"प्रमाण ? प्रमाण होगा गौरीशंकर।"

"गौरीशंकर ! वह कैसे प्रमाण हो सकता है ?"

"तुम बहुत भोली हो डियर !" बैकुण्ठ ने कहा, "तुम प्रत्येक की

बात पर विश्वास कर लेती हो, फिर विशेषत: पुलिस वालों की बातों पर।"

"लेकिन वह तो षड्यन्त्र में हमारे साथ सम्मिलित है," चाँद ने कहा।

"इससे क्या होता है ? है तो पुलिस-अधिकारी। हो सकता है, उसने भूल से किसी मित्र से बात की हो कि वह केवल कृष्ण को मज़ा चखाएगा अथवा घबराहट में किसीसे कह बैठा हो।"

"यह कैसे सम्भव हो सकता है ?" चाँद ने कहा।

"कैसे नहीं हो सकता ?" बैकुण्ठ ने उत्तर दिया, "फिर उसे नौकरी प्रिय है। जब आई० जी० उसे आँख दिखलायेंगे, वह तुरन्त सारा भेद प्रकट कर देगा, जैसे डी० पी०, जी० पी० और के० पी० ने किया है।"

"उन्होंने क्या किया है ?"

"तुम्हें यह भी नहीं मालूम ?"

"नहीं।"

"उन्होंने आई० जी० के सामने केवल कृष्ण के विरुद्ध किये गए षड्यन्त्र को स्वीकार कर लिया।"

"स्वीकार कर लिया ? क्यों ?"

"इसलिए कि मातादीन गौहर एक संगीन जुर्म में केवल कृष्ण के काबू में आ गया था और अपनी रक्षा के हेतु उसने सारी कहानी कह सुनाई।"

"सारी कहानी !" चाँद खड़ी न रह सकी, कुर्सी को पकड़कर फर्श पर बैठ गई। कमरा उसकी आँखों के सामने घूम रहा था। "पानी," जैसे उसका दिल बैठा जा रहा था।

"बहुत बुरा हुआ," बैकुण्ठ कहने लगा, "हम कहीं के न रहेंगे। सुबह पुलिस हमारे मकान का घेरा डाल लेगी, मुझे और आपको पकड़कर बन्द कर देगी। शत्रुओं के घर घी के दीये जलेंगे। केस चलेगा, गवाहियाँ होंगी। अखबारी प्रोपेगंडा का भंडा फूटेगा। मातादीन गौहर

कोर्ट में मेरे और आपके हाथ से लिखे हुए कागज़ प्रस्तुत करेगा। शम-सुद्दीन मेरे और आपके विरुद्ध गवाही देगा। आपसे अन्तिम भेंट की पूरी तफ़सील का वर्णन करेगा। गौरीशंकर से तो आप कोई अच्छी आशा नहीं रख सकतीं। अपने-आपको बचाने के लिए, अपनी पोज़ीशन सुरक्षित रखने के लिए, वह अपने माता-पिता, अपनी पत्नी और अपने बच्चों के खिलाफ़ भी गवाही दे सकता है। हम तो भला उसके क्या लगते हैं? और फिर हमें दण्ड मिलेगा, जेल और जुर्माना और·······"

"बस ! बस !" वह चिल्लाकर बोली।

"और पत्रों में मुकद्दमे की तफ़सील छपेगी। हॉकर चिल्ला-चिल्ला-कर शीर्षक पढ़ेंगे। पत्र धड़ाधड़ बिकेंगे। लोग पढ़ेंगे और हैरान होंगे। फिर तुम पर टिप्पणी करेंगे और मुझे गाली देंगे।"

"बैकुण्ठ ! बस करो। मेरा दिल बैठा जा रहा है। मैं मर जाऊँगी।"

"लेकिन पुलिस तो सुबह ही आ जायगी। उसे कैसे रोकेंगे?"

"कहीं छिप चलें।"

"वे पता लगा लेंगे।"

"भाग चलें।"

"कहाँ ?"

"कहीं भी, यहाँ से दूर, बहुत दूर।

"तुम होश में हो ?"

"बहुत कम।"

"तो पहले होश में आ जाओ। लो यह पानी पियो और अब सोच-कर बात करो। कहाँ भाग चलें ?"

"दूर, बहुत दूर।"

"और केसरचन्द ?"

"उसे जाने दो भाड़ में, मर्दूद कहीं का। अगर वह पुरुष होता तो आज यह नौबत ही क्यों आती ? फिर वह यहाँ है भी तो नहीं, कई दिनों के बाद आयेगा। तब तक हम कहीं-से-कहीं पहुँच जायेंगे।"

"सोच लो।"

"कैसी बात कर रहे हो ? सोचने का समय ही कहाँ है ? लेकिन गाड़ी का समय भी तो नहीं होगा।"

'अभी तो है, एक घण्टे बाद वह भी नहीं रहेगा।"

"तो शीघ्रता करो, मै कपड़ों इत्यादि का ट्रंक तैयार करती हूँ, तुम अपनी तैयारी करो।"

चाँद रानी ने बिजली की तेज़ी के साथ अपने गर्म और रेशमी कपड़ों को समेटा, गहनों को इकट्ठा किया, नकद रुपया निकाला, दो बिस्तर तैयार किये और बोली, "चलिये, लेकिन हाँ जॉर्ज ?"

"उसकी चिंता न कीजिए। मैंने उसके नाम एक पत्र लिख दिया है कि हम एक आवश्यक कार्यवश दिल्ली जा रहे है। एक सप्ताह में लौटेंगे, साहब से कह दे कि घर का ध्यान रखें।"

"और दूसरी चाबी उसके पास है ही।"

जब वे ताँगे में स्टेशन पहुँचे और गाड़ी में बैठ गए तो चाँद ने पूछा, "कहाँ की गाड़ी है ?"

"लखनऊ की।"

"मतलब ?"

"मतलब, हम दिल्ली नहीं लखनऊ जायेंगे। वहाँ से कठियार के लिए गाड़ी लेंगे, फिर सिलीगुरी के लिए और फिर दार्ज़िलिंग पहुँचेंगे।"

"आप तो वहाँ हो आये हैं ?"

"दो बार, आपको बतलाया तो था।"

"वहाँ से कहाँ जायेंगे ?"

"वहाँ से जाने के लिए बहुत स्थान हैं—कालिम्पांग, गेंटोक, शिलांग। दार्जिलिंग ही क्यों न रुकेंगे ? लेकिन ये सब बातें वहाँ जाकर सोचेंगे।"

"यह भी ठीक है।"

लखनऊ में दो घण्टे प्रतीक्षा करने के बाद उन्हें एक्सप्रेस मिल गई

और अगले दिन कठियार जाकर उन्हें गाड़ी फिर बदलनी पड़ी। शाम को वे सिलीगुरी पहुँचे। विभाजन के पश्चात् नया स्टेशन बना था और रात को बिजली के प्रकाश से जगमगा रहा था। उन्हें रात वेटिंग रूम में काटनी पड़ी, क्योंकि शहर काफी दूर था और गाड़ी प्रातः फिर बदलनी थी। सुबह प्रातः आठ बजे वे उस छोटी-सी गाड़ी मे बैठ गए। दो-तीन मील के बाद परिवर्तन महसूस होने लगा और पर्वतीय दृश्य नज़र आने लगा। पहले स्टेशन पर उस छोटी-सी गाड़ी को दो गाड़ियों में विभक्त कर दिया गया और दोनों को जुदा-जुदा इंजन खींचने लगे। दोनों ओर रमणीक और नैसर्गिक दृश्य था। गाड़ी की लाइन मोटर की लाइन के साथ-साथ जाती थी। प्रायः मोटरकारें पीछे से आकर आगे निकल जातीं और रेलगाड़ी को एकदम पीछे छोड़ जाती। यह उसकी उदारता थी अथवा निर्बलता, गाड़ी कभी आगे नहीं निकल सकी। कुरसियांग स्टेशन आधे रास्ते पर स्थित था। गाड़ी से उतरकर वे एक दुकान में घुस गए, क्योंकि बाज़ार और स्टेशन एक-दूसरे से लगे हुए थे। वहाँ उन्होंने नाश्ता लिया। दुकान पर स्त्रियाँ ही सौदा बेचती थीं। पुरुष एक भी नज़र नहीं आया। गाड़ी फिर चली और साढ़े तीन बजे शाम को दार्जिलिंग पहुँची। बैकुण्ठ दो बार वहाँ हो आया था। वह वहाँ स्कूल के लड़कों की पार्टियों के साथ गया था और होटलों से पूर्णतया परिचित था। स्टेशन पर कुली का काम स्त्रियाँ ही करती थीं। दो औरतों ने सामान अपनी पीठों पर उठाया और चढ़ाई चढ़ने लगीं। चाँद आश्चर्यचकित हो गई। उसने अपने प्रदेश में औरतों को मज़दूरी करते देखा था, पर इस तरह की गोल और लाल चेहरों और सुगठित शरीर वाली स्त्रियों को कुलियों का काम करते पहली बार देखा था।

वे प्रिंस होटल पर पहुँचे और एक कमरा किराये पर ले लिया।

चाय पीने और कपड़े बदलने के बाद वह उसे घुमाने और सैर कराने ले गया। उस समय नर-नारी चौरस्ते पर जमा थे। चौरस्ता ही वहाँ रौनक का प्रमुख स्थान था। चाँद रानी औरतों के फैशन और लोगों के

हाव-भाव को देखकर हैरान रह गई। यहाँ का वातावरण अपने शहर के माहौल से कितना भिन्न था। वे पहाड़ी का चक्कर काटने चले। मार्ग में एक ओर एक बेंच पर बैठकर वे प्राकृतिक छटा का आनन्द उठाने लगे। सामने कंचंचंगा का हिमाच्छादित उत्तुङ्ग शिखर नज़र आ रहा था। वे दोनों विस्मित दृष्टि से उसे तकते रहे। कुछ देर बाद चाँद बोली, "क्या सोच रहे हो?"

"यही कि पर्वतीय स्थानों पर लोग क्यों आते हैं।"

"क्यों आते हैं?"

"कि ऊँची जगह बैठकर ऊँचा सोच सकें, बुलन्द चोटियों को देखकर विचार और संकल्प को बुलन्द कर सकें। तुच्छ बातों से मन को स्वच्छ रख सकें।"

"तुम तो कवि बन रहे हो।"

"जगह ही ऐसी है। यहाँ आकर अब वापस जाने को जी नहीं चाहता।"

"कहाँ, होटल में?"

"नीचे मैदान में।"

"तो मत जाओ।"

"मेरा बस चले तो कभी न जाऊँ, लेकिन......"

"मैं साथ हूँ, यही न?"

"हाँ।"

"मैं क्यों आपत्ति करूँ, लेकिन सम्भव भी तो नहीं होगा।"

"सम्भव तो हो सकता है," बैकुण्ठ ने कहा, "यदि तुम दृढ़ संकल्प कर सको।"

"संकल्प से क्या होगा? हमारे पीछे तो पुलिस होगी।"

"वह सब ठीक हो जायगा," बैकुण्ठ कहने लगा, "वहाँ हमारा रहना खतरनाक था। हमारे आ जाने के बाद शमसुद्दीन स्थिति को सँभाल लेंगे।"

"सँभाल लेंगे ? उसी बुड्ढे ने तो सारी आग लगाई है," वह क्रुद्ध हो बोली।

"इतनी देर से उसे जानते हुए तुम उसे नहीं समझ सकी हो। वह जितना रसिक है, उतना धर्मभीरु भी है। पिछले दिनों जो उसमें घोर परिवर्तन आया है, उसने उसका कायाकल्प कर दिया है। उसे तुमसे प्रेम था, लेकिन वह दूसरों से शत्रुता भी नहीं कर सकता। यह उसकी प्रबल प्रेम-भावना ही थी, जिसने इतने लोगों को सर्वनाश से बचाने के लिए उसे यह दूसरा षड्यन्त्र रचने पर बाध्य किया।"

"दूसरा षड्यन्त्र ?" वह विस्मित होकर बोली।

"मेरा मतलब," वह घबराकर दिल की बात भूल से ज़बान पर आने के कारण लज्जित होकर कहने लगा, "हमें बचाने का षड्यन्त्र।"

"तो उसे यह पता है कि हम यहाँ भागकर आए हैं ?"

"दरअसल मैं तुम्हें यहाँ उसीके कहने पर लाया हूँ। तुमसे अन्तिम भेंट के बाद उसने मुझे सारी स्थिति से परिचित कर दिया और मुझसे बहुत अनुनय-विनय की और कहने लगा—बैकुण्ठ ! मामला बहुत बिगड़ चुका है। बात दूर पहुँच गई है। इस वक्त मौके की नज़ाकत यह चाहती है कि तुम कुर्बानी दो।"

"मैं कुर्बानी दूँ ?" मैंने पूछा।

"हाँ बैकुण्ठ, तुम ! चाँद होश में नहीं, जोश में है। अगर तुमने कुर्बानी न की तो वह ग़लत क़दम उठाएगी। किसी दूसरे की जान लेगी, अपनी जान से हाथ धो बैठेगी। उसके साथ जब मामले की जाँच होगी और सब पर्दा फाश होगा तो कितने ही और लोग लपेटे जायँगे। तबाही और बर्बादी का वह मंज़र (दृश्य) होगा कि अल अमान, (खुदा की पनाह)।"

"मैं क्या कुर्बानी करूँ ?" मैंने पूछा।

"तुम उससे विवाह कर लो, बैकुण्ठ !"

"विवाह !" चाँद हैरानी से बोली।

"हाँ, उसने यही कहा था।" बैकुण्ठ ने उत्तर दिया।

"तो तुमने क्या कहा?"

"तुम्हारे विचार में मुझे क्या कहना चाहिए था?"

"मुझसे तुम विवाह क्यों करने लगे? मुझमें विवाह योग्य बात ही क्या है? मैं बचपन से वातावरण का शिकार रही हूँ, प्रेम से वंचित रही हूँ। समाज ने मेरे साथ जो दुर्व्यवहार किया, उसका बदला मैंने समाज से लिया। अब वह मुझे क्षमा क्यों करने लगा? यद्यपि मैंने केसरचन्द से यथाविधि विवाह नहीं रचाया, लेकिन संसार की दृष्टि में वह मेरा पति है। यद्यपि तुम सारी बात जानते हो, फिर भी मेरे साथ विवाह क्यों करने लगे?"

"यदि तुम्हें एतराज़ न हो तो.........."

"सच?" वह उसका हाथ पकड़ और उसकी आँखों-में-आँखें डालकर बोली। वह उसकी आँखों में उसके दिल को टटोलकर यथार्थ जानना चाहती थी।

"हाँ चाँद! तुममें वह सब-कुछ है जो एक स्त्री में होना चाहिए। तुमने जो-कुछ असाधारण काम किया है, वह तुम अकेली का दोष नहीं। समाज ने तुम्हारे साथ अन्याय किया है और मैं उसके लिए प्रायश्चित् करूँगा।"

वह चुप रही।

"और फिर शमसुद्दीन ने मुझे एक हज़ार रुपया नकद दिया।"

"एक हज़ार!"

"हाँ, ताकि हम आराम से यहाँ पहुँचकर विवाह रचा सकें और नया जीवन आरम्भ कर सकें।"

वह कुछ न बोल सकी। उसका हृदय कृतज्ञता के बोझ से दबा जा रहा था। वह समझ रही थी—वह इस रमणीक पर्वतीय दृश्य के मध्य, इस नैसर्गिक छटा के बीच, यथार्थ से दूर, बहुत दूर, एक स्वप्नों के संसार में बैठी है। उसके कान मधुर शब्दों की झंकार सुन रहे हैं। वह

चाहती है, वह उस दृश्य को देखती रहे, उस छटा से आनन्दित होती रहे, उसके कान में मधु घुलता रहे। उसने कभी सोचा तक न था कि उसके जीवन में कभी ऐसी घड़ी आएगी और वह इतना मधुमय हो सकेगा।

"क्या सोच रही हो ?"

"कि यह स्वप्न है अथवा यथार्थ ?"

"क्यों ?"

"इसलिए कि मेरे साथ तुम विवाह करने की बात कर रहे हो। क्या यह सच हो सकता है ?"

वह सामने कंचंचंगा की चोटी की ओर ताकने लगा। कुछ देर बाद बोला, "मेरा जीवन भी कितना रूक्ष रहा है! मैं बचपन से यतीम था। चाचा ने दसवीं तक पढ़ाया। वह भी चल बसे। कॉलेज में अपनी हिम्मत से पढ़ा। स्कूल में नौकरी मिलने पर तुमसे परिचय हुआ। मैंने अपने जीवन में एक ही स्त्री देखी है। यह बात औरतें करती हैं, लेकिन यहाँ मैं ऐसा कह रहा हूँ और मैं अत्युक्ति के बिना यह कह सकता हूँ कि अपने रूखे-सूखे जीवन में मुझे पहली बार प्यार मिला। मेरा हृदय द्रवित हो गया। इतने व्यक्तियों के आने से भी मुझे जो अनुरक्ति तुमसे हुई, वह जा न सकी। ईर्ष्या ने मुझे कभी नहीं सताया, दूसरों के घर आने से मेरे अन्दर कभी द्वेष उत्पन्न नहीं हुआ। मैं तुम्हारा कृतज्ञ था और वही कृतज्ञता मुझे विवश कर रही है कि मैं तुम्हें दलदल से निकाल कर..........."

"सुमार्ग पर लाऊँ, यही न ?"

"यदि धृष्टता न मानो तो यही कह दूँ ?"

सूर्य दिन की यात्रा समाप्त कर पश्चिम में पर्वतों की ओट में उतर रहा था। उसकी स्वर्णिम लालिमा कंचंचंगा के श्वेत तथा उत्तुंग शिखरों से आलिंगन कर रही थी और बिलकुल वही लालिमा चाँद रानी के मुख पर नृत्य कर रही थी। दिन और रात्रि के उस मधुर मिलन

में वह जीवन में पहली बार अपने हृदय का एक दूसरे हृदय से मिलन अनुभव कर आनन्दविभोर हो रही थी ।

काश इस रमणीक दृश्य के बीच, उसके हाथ में हाथ रखे, वह सदा यहाँ बैठी रहे, उसका स्वप्न क्षणभंगुर सिद्ध न होकर स्थायी वास्तविकता में परिणत हो जाय। उसके मन में कुतूहल हो रहा था, आगामी जीवन का। वह नया जीवन आरम्भ कर रही थी, सच्चा और सुखमय। यदि बैकुण्ठ उसे पहले ही मिल जाता ? लेकिन भाग्य को क्या करती ? अब भी क्या बिगड़ा है ? लेकिन क्या वह नये जीवन को अपना सकेगी, एक अच्छी गृहिणी बन सकेगी ?

"अवश्य बनूँगी," उसके मुँह से निकल गया।

जब बैकुण्ठ ने उसकी आकृति पर दृष्टि दौड़ाई, वहाँ लज्जा नृत्य कर रही थी।

उसकी मानसिक स्थिति और मनोभावना को समझकर बैकुण्ठ मुस्कराने लगा।